Hkkjr&frCcr laca/k%
lk>h fojklr] lk>k Hkfo";

INDIA TIBET
COORDINATION OFFICE

भारत तिब्बत समन्वय केन्द्र

हिन्दी अनुवादक

fnus'k vxzgfj

2019

प्रकाशक :

भारत तिब्बत समन्वय केन्द्र

एच–10, द्वितीय तल,

लाजपत नगर–3, नई दिल्ली–110024

फोन : 011–29830578

टैलीफैक्स : 011–29840968

ई–मेल : indiatibet7@gmail.com

वैबसाईट : www.indiatibet.com

©DIIR

प्रथम संस्करणः मार्च 2019

500 प्रतियां

मुद्रक : वी एन प्रिन्ट–ओ–पेक, नई दिल्ली–110020

ई–मेल : vnprints@gmail.com

fo"k;&lwph

प्रस्तावना 5

1. तिब्बत के लोगों की उत्पत्ति और पहले राजा न्यात्री त्सेनपो के पूर्वज.. 7

2. तिब्बत के महान धर्म राजाओं के शासनकाल के दौरान आध्यात्मिक और सांस्कृतिक संबंध 10

3. काग्युर एवं तेंग्युर 15

4. वर्तमान तिब्बती लिपि का स्रोत 18

5. भाषाई संबंध की रूपरेखा 20

6. भारतीय ऋण–तिब्बती भाषा के शब्द 24

7. तिब्बती सोवा रिग्पा और भारतीय आयुर्वेद 45

8. ज्योतिष भी भारत और तिब्बत के बीच एक कड़ी है 51

9. भारत और तिब्बत के बीच गुरु–चेला संबंध 55

10. तिब्बती पठार का वैश्विक महत्व 59

11. तिब्बतः एशिया का जल टावर 62

12. तिब्बत पठार पर मौजूदा पर्यावरण हालात और भारत पर उसका निहितार्थ 65

13. तिब्बत पर चीनी कब्जा और भारत पर खतरा 70

14. आज के सांस्कृतिक संबंध 75

çLrkouk

यह कहानी, शायद एक लाख साल पहले शुरू हुई। जब भारतीय द्वीप एशियाई प्लेट से टकराया। इस टकराव के बिना भी भारतीय द्वीप पर जीवन अबाधित अनंत काल तक शायद चलता रहता, फिर भी न तो तिब्बत की हमेशा एक समुद्र बने रहने की नियति थी और न ही भारत की निरंतर रूप से एक द्वीप बने रहने की।

प्राचीन भारत और तिब्बत के बीच पहला ऐतिहासिक संपर्क तब हुआ जब 127 ईसा पूर्व में न्यात्री त्सेन्पो यारलुंग राजवंश के पहले तिब्बती राजा के रूप में राजगद्दी पर आसीन हुए। उनके बारे में कहा जाता है कि वे शाक्य वंश (बुद्ध के गोत्र) के थे। और भारत से मध्य तिब्बत में एक पौराणिक 'आकाश–रस्सी' की मदद से उतरे थे।

हालांकि, आधुनिक शोध ने दुनिया की छत पर एक उच्च विकसित पूर्व–बौद्ध सभ्यता की उपस्थिति का खुलासा किया है। बॉन धर्म जो तिब्बत में बौद्ध धर्म की शुरुआत से काफी पहले पनपा था। पश्चिमी तिब्बत में स्थित शांगशुंग राज्य का भारत और मध्य एशिया के साथ नियमित संपर्क था। इसकी तब प्रचलित मानी जाने वाली लिपि मार–यिग भारत की एक पुरानी ब्राह्मी लिपि से ली गई थी।

भारत और तिब्बत के बीच संबंधों में एक नया मोड़ तिब्बत में बौद्ध धर्म (7वीं–8वीं शताब्दी) के पहले प्रचार के रूप में जाना जाता है। कई महान भारतीय मनीषियों जैसे पद्मसंभव और शांतरक्षित ने तिब्बत की यात्रा की। बौद्ध धर्म एक राज्य धर्म बन गया। बौद्ध धर्मग्रंथों का अनुवाद करने के सिलसिले में वर्तमान तिब्बती लिपि और व्याकरण को भारत से राजा सोंगत्सेन गाम्पो के एक मंत्री थोनमी सम्भोटा द्वारा लाया गया था।

दूसरे धर्म प्रचार (10वीं–11वीं शताब्दी) को तिब्बत में पुनर्जागरण के रूप में माना जाता है–जिसके दौरान पश्चिमी तिब्बत में थोलिंग और सपरांग के मंदिर और गोम्पा (मठ) और साथ ही साथ अलची कला। साहित्य, वास्तुकला और आध्यात्मिकता का विकास हुआ था। हिमालय इस नवजागरण के स्रोत पर स्थित है। इस अवधि के दौरान, आयुर्वेद पर आधारित तिब्बती चिकित्सा ने एक देसीकरण की प्रक्रिया शुरू की, जिसके परिणामस्वरूप इसकी भारतीय जड़ें बरकरार रहीं।

उत्तर भारत के मुस्लिम आक्रमण (12वीं–13वीं शताब्दी) के बाद प्रेरणा का भारतीय स्रोत बौद्ध धर्म भी भारतीय उपमहाद्वीप से गायब हो गया। इस प्रकार तिब्बत ने मंगोलिया और फिर चीन से सुरक्षा मांगी। तिब्बती लामा अंततः मंगोल खान के गुरु बन गए और बाद में मिंग और मांचू सम्राटों के भी।

हालांकि, तिब्बतियों के लिए भारत हमेश के लिए आर्यभूमि के रूप में पवित्र भूमि बना रहा।

तिब्बत में चीनी आक्रमण की शुरुआत 1949–1950 में हुई। जिसके फलस्वरूप परमपावन 14वें दलाई लामा को भारत में निर्वासन आना पड़ा। वस्तुतः इसी ने भारत–तिब्बत के सांस्कृतिक रिश्तों को नया जीवन प्रदान कर दिया क्योंकि भारत में कई तिब्बती मठ विश्वविद्यालयों के साथ विभिन्न प्रतिष्ठित तिब्बती संस्थाओं की पुनर्स्थापना हुई। परमपावन 14वें दलाई लामा की उपस्थिति से हिमालय के बौद्ध क्षेत्रों में एक सांस्कृतिक पुनरुद्धार हो पाया।

हालांकि, भारत और तिब्बत के बीच सांस्कृतिक संबंध समय–समय पर अप्रत्याशित स्थगन के भी गवाह रहे हैं, पर सदियों बाद भी वह जीवित हैं। यह पुस्तक उसी तथ्य के लिए एक सम्मान और वसीयतनामा है।

1- frCcrh ykxksa dh mRifÙk vkSj igys jktk U;k=h RlEiks ds iwoZt

आइए सबसे पहले तिब्बतियों के उत्पत्ति के बारे में किसी भी संभावित गलतफहमी को दूर करें। नब्बे प्रतिशत से अधिक तिब्बती इतिहासकारों का मानना है कि तिब्बतियों की उत्पत्ति करुणा के देवता अवलोकितेश्वर के अवतार एक दयालु बन्दर और देवी तारा की अवतार चट्टानों की राक्षसी के मिलन से हुआ।

इतिहासकारों ने बाद में बताया कि इन दोनों पुरखों का देवत्वारोपण पहले तिब्बतियों की मानसिकता के अनुसार एक धार्मिक अलंकरण था। चट्टानों की राक्षसी एक मांसाहारी मादा चट्टानों पर रहने वाले बंदर के लिए एक व्यंजना है। हम 19वीं सदी के ब्रिटिश प्रकृतिवादी, चार्ल्स डार्विन के विकास के सिद्धांत को भी मानते हैं। फिर भी यह पहचानना उचित है कि तिब्बती विकासवादी सिद्धांत पहली बार 11वीं शताब्दी में दर्ज किया गया था–डार्विन के सिद्धांत से लगभग आठ सौ साल पहले।

तिब्बत में, यह विचार कि पहले तिब्बती भारतीय मूल के वंशज हैं को सबसे पहले एक भारतीय विद्वान शेरब गोचा ने अपनी किताब देवतीश्यस्त्रोत में दिया था। जिसका तिब्बती में अनुवाद 11वीं सदी में किया गया था। उन्होंने कहा कि रुपति नाम के भारतीय राजा एक युद्ध में हारने के बाद एक महिला का वस्त्र धारण कर के तिब्बत भाग गए थे और बाद में उनके ही वंशज अभी के तिब्बतियों के पहले पूर्वज हैं। कुछ भारतीय विद्वानों के अनुसार रुपति के तिब्बत में छिपने की घटना महाभारत के युद्ध का एक भाग है। 11वीं सदी के बाद बुतों रिनचेन धोंडुप जैसे इतिहासकार तिब्बतियों की उत्पत्ति के बारे में शेरब गोचा के वक्तव्य को ही सही मानने लगे।

17वीं सदी में, महान 5वें दलाई लामा ने अपनी पुस्तक 'वसंत ऋतु की रानी का गीत' में कहा है कि यद्यपि तिब्बतियों की उत्पत्ति बंदर और चट्टानी राक्षसी के मिलन से हुई है लेकिन संभव है कि तिब्बतियों के बीच ही रुपति के वंशज और अनुचर भी मौजूद हों। इसलिए अब यही उचित है कि हम 5वें दलाई लामा के विचारों के साथ अपना निष्कर्ष निकाल लें।

तिब्बत के पहले राजा की उत्पत्ति पर अधिकतर इतिहासकारों का यही मत है कि वह भारत से आए थे। कुछ का मानना है कि पहले राजा

का विचार ही 11वीं सदी ईसवी के आस–पास उत्पन्न हुआ। यह विचार सबसे पहले राजा सॉन्गत्सेन गाम्पो के आदेश बका–चेम का–कोलमा और मनी का–बुम में दर्ज मिलता है। और यह कहा जाता है कि दोनों आदेश ल्हासा के जोखांग मंदिर के खम्भे के नीचे एक भारतीय विद्वान अतिशा को 11वीं सदी में मिले।

बाद में, अधिकतर तिब्बती इतिहासकारों ने उन्हीं दोनों आदेश का उद्धरण लेते हुए तिब्बत के पहले राजा का भारतीय मूल के होने के अपने सिद्धांत को सही ठहराया। और इसके साथ ही पहले तिब्बती राजा के भारतीय वंशज होने और वह कैसे भारत से तिब्बत आए, इसके बारे में विभिन्न कथाएं सामने आईं। कुछ इतिहासकारों ने तिब्बतियों की उत्पत्ति की कहानी को राजा के मूल से जोड़ दिया और यह दावा किया कि तिब्बत के पहले राजा न्यात्री त्सेम्पो ही दरअसल रुपति थे।

कुछ का दावा है कि न्यात्री त्सेम्पो, कौशल के भारतीय राजा प्रसन्नजीत के पुत्र थे तो कुछ ने दावा किया कि वह बिंदुसार के पुत्र थे। इन सारे दावों को तिब्बती इतिहासकार पावो सुलक रिनवा ने कालभ्रमित मानते हुए अस्वीकृत किया। उनका कहना है कि रुपति का जन्म बुद्ध से पहले हुआ और तिब्बत का पहला राजा बुद्ध के परिनिर्वाण के बहुत समय बाद सामने आता है। कालक्रम के अनुसार कहें तो उन्होंने कहा कि यह दोनों व्यक्ति एक हो ही नहीं सकते।

उन्होंने यह भी कहा कि प्रसन्नजीत और बिन्दुसार दोनों ही बुद्ध के समकक्ष थे और उन दोनों की मृत्यु बुद्ध से पहले हुई थी। उन्होंने आगे कहा कि इन दोनों में से किसी राजा के पुत्र का तिब्बत का पहला राजा होना सम्भावना से परे है। उन्होंने कहा कि न्यात्री त्सेम्पो दरअसल शाक्य वंश के राजा लिच्छवी के वंशज थे और शाक्य वंश का उदय बुद्ध के जाने के बहुत समय बाद हुआ। समकालीन तिब्बती इतिहासकार त्सेपोन डब्ल्यू. डी. शाकब्पा अपनी किताब "ऐन एडवांस पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ तिब्बत" में कहते हैं कि न्यात्री त्सेम्पो मगध के राजा के पुत्र थे। मगध का इलाका अब भारत के बिहार प्रदेश के रूप में जाना जाता है। न्यात्री त्सेम्पो के तिब्बत में आने के बारे में यह कहा जाता है कि उनका जन्म अजीब शारीरिक रुपाकृतियों के साथ हुआ था। उनकी आंखों की पलकें छिपी हुई थीं, उनकी भौंहों का रंग फीरोजी नीला था, उसके दांत आकार

में सर्पिल और उसकी उंगलियां बत्तख की तरह टेढ़ी थीं। इस वजह से उनके पिता उन्हें दूसरों को नहीं दिखा सकते थे और जब वह बड़े हुए तो उन्हें महल से दूर भेज दिया गया। ऐसा कहा जाता है कि इस प्रकार वह तिब्बत में भटकते रहे।

कुछ का कहना है कि उन्हें तांबे की एक छोटी नाव में भेज दिया गया और एक किसान ने उनको पाया। बड़े होने पर जब उनको अपने अतीत के बारे में पता चला तो वे पीड़ा से अभिभूत हो गए और तिब्बत की ओर बढ़े। कुछ का कहना है कि तिब्बत पहुंचने पर वह गड़ेरियों से मिले और अन्य का कहना है कि वह बारह ज्ञानी बॉन धर्म के अनुयायियों से मिले जिन्हें अपने राजा की तलाश थी। एक ऐसा राजा जो पूरे तिब्बत पर शासन कर सके। जब बॉन धर्म के अनुयायियों ने उनसे पूछा कि वह कहां से आए हैं तो तिब्बती भाषा का ज्ञान न होने की वजह से वह उनकी बात समझ नहीं पाए। ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने अपनी ऊंगली से ऊपर की तरफ इशारा किया। वे लोग आकाश की पूजा करने वाले थे इसलिए उनको लगा कि वह एक दिव्य पुरुष हैं और उनको कंधे पर उठा कर तिब्बत का राजा बनाने के लिए बढ़ गए। तिब्बतियों ने उन्हें कंधों के सिंहासन का राजा 'न्यात्री त्सेम्पो' का नाम दिया।

पहले राजा के भारतीय मूल के प्रमाण के रूप में, कुछ इतिहासकारों का दावा है कि न्यात्री त्सेम्पो से पहले, तिब्बती लोग टेंट में रहते थे क्योंकि अधिकांश तिब्बती खानाबदोश जीवन जीते थे। तिब्बत आने के बाद उन्होंने पारंपरिक भारतीय स्थापत्य शैली में तिब्बत का पहला महल, युम्बु ल्हखांग बनाया, क्योंकि वह इससे परिचित थे। यह पुनर्निर्मित महल आज भी मध्य तिब्बत के यारलुंग में मौजूद है।

हिमालयी क्षेत्र में रहने वाले लोगों की वर्तमान समय की वास्तविकता पर कोई सोचे तो धर्म, संस्कृति और भाषा के हर एक पहलू को देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि उनमें से अधिकांश लोग तिब्बती नस्ल से अवतीर्ण हुए हैं।

2- frCcr d egku /kel jktkvk d 'kkludky d nkjku vk/;kfRed vkj lkLdfrd lc/k

233 ईस्वी को तिब्बत में बौद्ध धर्म के औपचारिक अधिष्ठापन के वर्ष के रूप में मान्यता प्राप्त थी। कहा जाता है कि तिब्बत के तत्कालीन 27वें राजा ल्हा थो थो–री न्येंत्सेन ने उसी साल बौद्ध धर्म के कुछ ग्रंथों और पूजा की सामग्री प्राप्त की थी। शाकब्पा के "ऐन एडवांस्ड पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ तिब्बत" के अनुसार तिब्बत सरकार ने इसको मान्यता देते हुए अपनी कागज की मुद्रा पर 233 ईस्वी को तिब्बती राजनीतिक तंत्र के उद्घाटन वर्ष के तौर पर छापा। लेकिन इस उद्घाटन वर्ष को तिब्बत में बौद्ध ग्रंथों के अनुवाद और दीक्षा के तौर पर नहीं माना जाना चाहिए। तिब्बतियों का मानना है कि यह बाद के वर्षों में हुए बौद्ध धर्म के विकास की शुरुआत थी।

तिब्बत में बौद्ध धर्मग्रंथों के अनुवाद और शिक्षण के रूप में बौद्ध धर्म प्रचार का पहला चक्र 7वीं सदी में तिब्बत के 33वें राजा और पहले धर्म राजा सॉन्गत्सेन गाम्पो के शासनकाल के दौरान शुरू हुआ। धर्म राजा की विशेष उपाधि सिर्फ तीन राजाओं को दी गई, जिनका नाम सॉन्गत्सेन गाम्पो, त्रिसोंग देत्सेन और त्रि–रेल्पाचेन है। बौद्ध धर्म के प्रमुख अनुयायियों के रूप में, वे इसके मुख्य प्रवर्तक भी बने। बुद्ध की शिक्षाओं को फैलाने के उनके प्रयासों को हम आगे पढ़ेंगे।

यह कहा जाता है कि राजा सॉन्गत्सेन गाम्पो का ही आग्रह था कि तिब्बत की अपनी परिष्कृत लिपि हो। इसके लिए उन्होंने थोन्मी सम्भोटा (तिब्बती वर्तनी के जनक) को भारतीय भाषाएं सीखने के लिए भेजा। भारत में सात वर्षों के प्रवास के दौरान उन्होंने भारतीय भाषाओं के साथ ही बौद्ध दर्शन में भी विशेषज्ञता प्राप्त की। ऐसे ज्ञान को प्राप्त कर वह तिब्बत लौटे और तत्कालीन गुप्त–ब्राम्ही लिपि के आधार पर वर्तमान तिब्बती लिपि का अविष्कार किया। भारतीय व्याकरणिक प्रणाली के आधार पर उन्होंने पहले तिब्बती व्याकरण ग्रंथों की रचना की। थोन्मी के विद्वता की इन गतिविधियों को भारत–तिब्बत भाषाई संबंधों के शुरुआत की पहली कड़ी के रूप में पहचान मिली। और फिर राजा के आदेशानुसार थोन्मी ने भारत, नेपाल और चीन के बौद्ध विद्वानों के सहयोग से उन बौद्ध धर्मग्रंथों का अनुवाद किया जिन्हें वो भारत से लाए थे और ल्हा थो थो–री न्येंत्सेन के समय

में जो धर्मग्रंथ प्राप्त किए गए थे। इस प्रकार धर्म राजा सॉन्गत्सेन गाम्पो के संरक्षण में पहला भारतीय बौद्ध ग्रंथ तिब्बती में अनुवादित किया गया। इसके बाद एक हजार सालों से अधिक समय से भारतीय बौद्ध ग्रंथों और अन्य साहित्य का तिब्बती में अनुवाद जारी है।

राजा सॉन्गत्सेन गाम्पो ने खुद को एक संरक्षक की भूमिका तक ही सीमित नहीं रखा बल्कि थोन्मी सम्भोटा के सानिध्य में चार वर्षों तक नई आविष्कृत तिब्बती लिखित भाषा के साथ साथ बौद्ध दर्शन को भी सीखा। भारत की सबसे परिष्कृत दर्शन संस्कृति के सानिध्य में चार वर्षों तक रहने का प्रभाव उनके "दस दिव्य सिद्धांतों" और "सोलह मानवीय सिद्धांतों" में भलीभांति दिखाई पड़ता है। बाद में इन्हीं सिद्धांतों को उन्होंने तिब्बत में लागू नए कानून की नैतिक निर्देशिका के रूप में डाला था। इसके साथ ही राजा ने बौद्ध धर्म के चार आधारभूत नियमों (हत्या न करना, चोरी न करना, व्यभिचार न करना और झूठ न बोलना) को "सात महान कानून" के अंतर्गत रखा। पहले तीन नियमों का पालन न करने पर कानूनन दंड की व्यवस्था की गई।

संक्षेप में कहें तो 14वें दलाई लामा आज तिब्बत की जिस करुणामय संस्कृति को बार–बार दुहराते हैं वह निसंदेह ही तिब्बतियों की सबसे कीमती संपत्ति है और दुनिया भर की प्रशंसा और आदर का हकदार है। इस संस्कृति को सबसे पहले भारत से ही धर्म–राजा सॉन्गत्सेन गाम्पो के शासनकाल में लिया गया। सॉन्गत्सेन गाम्पो के शासनकाल में भारत–तिब्बत के संबंध न सिर्फ धर्म और भाषा के क्षेत्र में फले–फूले बल्कि वास्तुकला और व्यापार के क्षेत्र में भी प्रगाढ़ हुए।

पहले के कई इतिहासकारों ने यह आकलन किया है कि सॉन्गत्सेन गाम्पो द्वारा बनवाया गया तिब्बत का प्रसिद्ध जोखांग मंदिर भारत की तत्कालीन परम्परागत वास्तु शैली में बनाया गया था। इन दावों के सत्यता की खोज 20वीं सदी के तिब्बती विद्वान गेडून छोफेल की भारत और श्रीलंका की प्रसिद्ध बौद्धिक यात्रा के दौरान हुई। इस खोज की घटना का जिक्र उनकी यात्रा वृत्तांत में दर्ज है। वह लिखते हैं कि लूटे गए प्राचीन भारतीय मंदिर और पुराने तिब्बती मंदिरों के बीच काफी समानता है, पुराने तिब्बती मंदिरों की तरह ही यहां भी चारो कोनों पर स्वास्तिक की सजावट है। यहां तक कि खम्भों का आकार भी समान है। अगर जोखांग मंदिर के संतुलित रूप

से खड़े खम्भों में से एक खम्भे को यहां के मंदिरों के एक खम्भे से बदल भी दिया जाए तो कोई अंतर प्रतीत नहीं होगा।

व्यापार के क्षेत्र में, धेव की 'हिस्ट्री ऑफ धर्म' में भारत–तिब्बत में व्यापार के अवसरों का उल्लेख है। राजा सॉन्गत्सेन गाम्पो के शासनकाल में भारत से चावल, गेहूं और तिब्बत में न पैदा होने वाले फलों का आयात होता था। चिकित्सा ज्ञान के क्षेत्र में यह दर्ज किया गया है कि पुराने समय में राजा ने भारत, चीन, फारस (ईरान) से चिकित्सा विशेषज्ञों को आमंत्रित किया था और उन सबने मिल कर 'भयमुक्त अस्त्र' नामक चिकित्सा ग्रंथ की रचना की थी। इस तरह कहा जा सकता है कि तिब्बतियों ने उस समय की भारतीय चिकित्सा विद्या से पहला परिचय कर लिया था।

यद्यपि तिब्बतियों ने पहले धर्म राजा के संरक्षण में बौद्ध धर्म के प्रसार को तो देखा पर तिब्बत के मूल धर्म 'बॉन' के अनुयायी जो बौद्ध धर्म को विदेशी आस्था का घुसपैठ मानते थे और उन्होंने इसके प्रसार को आसान रास्ता नहीं दिया। करीब सौ सालों बाद दूसरे धर्म राजा त्रिसोंग देत्सेन के शासनकाल में खासकर धर्म के क्षेत्र में भारत–तिब्बत के संबंध गहरे हुए। बौद्ध धर्म के प्रसार में त्रिसोंग देत्सेन की इतनी सहायता मिली कि तिब्बत में भारतीय विद्वान अतिशा के बौद्ध धर्म की दीक्षा को भारत से भी अधिक आदर और सम्मान मिला। इन्हीं के शासनकाल में भारतीय गुरु शांतरक्षित और पद्मसंभव को आमंत्रित किया गया और इन लोगों ने तिब्बत में बुद्ध के सूत्र और तंत्र विद्या को लागू किया।

बाद में राजा द्वारा भारतीय विद्वान कमलशिला को आमंत्रित किया गया जिन्होंने तिब्बतियों के ध्यान के अभ्यास में आने वाली अशुद्धियों को दूर किया और तिब्बत में ध्यान के अभ्यास पर किताबों की रचना की। दूसरे धर्म राजा ने अपने शासनकाल के दौरान भारतीय गुरु शांतरक्षित और पद्मसंभव के निर्देश में भारतीय मंदिर ओदांतपुरी की तर्ज पर तिब्बत के पहले मठ का निर्माण करवाया। इस मठ को भारत, चीन और तिब्बत की संस्कृतियों का संगम माना गया। इस मठ के अन्दर तिब्बत के पहले अनुवाद केंद्र को स्थापित किया गया। भारतीय बौद्ध ग्रंथों का सुगम अनुवाद उपलब्ध हो सके, इसके लिए इस अनुवाद केंद्र में संस्कृत की भी शिक्षा दी जाती थी। इस प्रकार यह केंद्र तिब्बत में संस्कृत की शिक्षा का पहला केंद्र बना। इन्हीं के शासनकाल के दौरान भारतीय गुरु शांतरक्षित के सानिध्य में तिब्बत

ने पहला तिब्बती संघ समूह भी देखा। तिब्बती अनुवादकों ने बड़ी संख्या में बौद्ध ग्रंथों का अनुवाद किया। साथ ही मठअध्यक्ष भीमलामित्र, संग्य संगवा, और शांति गरबा जैसे भारतीय विद्वानों के साथ मिल कर तिब्बती अनुवादकों ने तिब्बती में अनुदित सभी बौद्ध ग्रंथों के शीर्षकों को सूचीबद्ध किया था। जिसकी शुरुआत पहले अनुवादक थोन्मी सम्भोटा ने की थी।

हजारों वर्षों से, तिब्बती इतिहास और संस्कृति भारतीय धर्म और दर्शन से प्रभावित रही। तिब्बत को भारतीय तर्क परंपरा भी विरासत में मिली। तिब्बत में इस तर्क परंपरा का चलन दूसरे धर्म राजा त्रिसोंग देत्सेन के शासनकाल के दौरान शुरू हुआ। ऐसा कहा जाता है कि उनके समय के दौरान तिब्बत में बौद्ध धर्म के प्रसार को तिब्बती मूल के बॉन धर्म के अनुयायियों के विरोध का सामना करना पड़ा। और यह शांतरक्षित ही थे जिन्होंने एक संवाद परिषद आयोजित करने का प्रस्ताव रखा और यह भी सुझाव दिया कि जो कोई भी अखंडनीय तर्क और दलील प्रदान करने में विजयी होगा उसे ही धर्म–प्रचार का अधिकार दिया जाना चाहिए।

बॉन धर्म पर बौद्ध धर्म की विजय ने तिब्बत में बौद्ध धर्म के प्रसार को और भी बढ़ा दिया। दूसरे धर्म राजा के शासनकाल के दौरान ही एक बार फिर तिब्बती और चीनी बौद्धों के बीच ध्यान करने के तरीकों को लेकर मतभेद सामने आए। इस विवाद का निपटारा करने के लिए राजा त्रिसोंग देत्सेन ने शांतरक्षित के शिष्य कमलशिला को नेपाल से आमंत्रित किया।

ऐसा कहा जाता है कि तत्कालीन तिब्बती चिकित्सा विद्या को परिष्कृत करने के लिए राजा त्रिसोंग देत्सेन ने भारत, चीन, नेपाल, फारस (ईरान) और भारत के कश्मीर से उच्च विद्वता प्राप्त नौ विद्वानों को अपने निजी चिकित्सक युथोक योंतेन गोंपो के साथ चिकित्सा पर एक सम्मेलन करने के लिए आमंत्रित किया। इसी सम्मेलन के परिणामस्वरूप युथोक को आयुर्वेद के बारे में अधिक जानकारी हासिल करने का मौका मिला। आयुर्वेद की विद्या के बारे में अधिक से अधिक ज्ञान अर्जित करने की प्रबल इच्छा के चलते उन्होंने बाद में भारत की तीन यात्राएं की। वह कुल मिला कर नौ साल और आठ महीने तक भारत में रहे और आयुर्वेदिक प्रणाली की समझ के लिए सैकड़ों विभिन्न गुरुओं से ज्ञान अर्जित किया।

राजा त्रिदे सोंगत्सेन के निर्देश पर तीसरे धर्म राजा त्रित्सुक देत्सेन

राल्पाचेन को बचपन से ही लिखने, पढ़ने और बौद्ध धर्म की शिक्षाओं का प्रशिक्षण बौद्ध गुरुओं द्वारा दिया गया। बहुत कम उम्र से ही उनमें तीन रत्नों (बुद्ध, धर्म और संघ) के प्रति अंतर्निहित आस्था समाहित हो चुकी थी और राजगद्दी मिलने के बाद उन्होंने बौद्ध समुदाय को अत्यधिक सम्मान और विशेषाधिकार दिए। अपने शासनकाल के दौरान राजा राल्पाचेन ने मठ प्रमुख जिनामित्र, सुरेन्द्र बोधि, शैलेन्द्र बोधि, बोधिमित्र जैसे अनेक भारतीय विद्वानों को तिब्बत आमंत्रित किया जिनके साथ मिल कर तिब्बती अनुवादकों ने बड़ी संख्या में उन बौद्ध ग्रंथों का अनुवाद किया जो तिब्बत में पहले नहीं थे।

उन्होंने साथ मिल कर पहले से अनुदित ग्रंथों की फिर से समीक्षा भी की ताकि ग्रंथों की प्रमाणित प्रतियां बन सके। अंतिम और तीसरे धर्म राजा के शासनकाल के दौरान भारत और तिब्बत के बीच वाणिज्यिक लेन देन में सुविधा पैदा करने के लिए मगध के अनुरूप माप प्रणाली बनाई गई।

इस तथ्य से हमें स्पष्ट रूप से पता चलता है कि भारत–तिब्बत व्यापार का द्वार पहले धर्म राजा द्वारा खोला गया था जो न केवल अंतिम धर्म राजा के शासनकाल के दौरान जारी रखा गया बल्कि भारत और तिब्बत के बीच वाणिज्यिक यातायात की आवृत्ति भी उच्च स्तर पर पहुंच गई थी। भारत–तिब्बत के धर्म और सांस्कृतिक संबंध इन तीन धर्म राजाओं के शासनकाल के दौरान न सिर्फ पहली बार स्थापित किए गए थे, बल्कि पूरे तिब्बत और इसके पड़ोसी क्षेत्रों में भी प्रचारित किए गए थे।

3- dkX;wj vkSj rsaX;wj

आर्यभूमि या भारत पृथ्वी की सबसे पुरानी सभ्यताओं में से एक है। यह पौराणिक कथाओं, महान ऋषियों और मुनियों की भूमि है। यह विभिन्न धर्मों और कपिल, कम्मद, व्यास महावीर और अन्य महाऋषियों द्वारा सिखाए जाने वाले दर्शनों का स्रोत रहा है। 625 ई.पू. में जन्मे गौतम बुद्ध भी अपने समय के महान शिक्षकों में से एक थे। भारत से उत्पन्न हुए विभिन्न धर्मों में से सिर्फ बौद्ध धर्म ही तिब्बत तक पहुंचा और 1465 सालों से भी अधिक समय तक फला–फूला।

तिब्बत के राजा सॉन्गत्सेन गाम्पो ने भारत से बौद्ध धर्म का परिचय तिब्बत को कराया। उन्होंने बौद्ध धर्म, संस्कृत, पाली और अन्य भारतीय भाषाओं की शिक्षा ग्रहण करने के लिए कई युवा और मेधावी तिब्बतियों को भारत भेजा। यह भारतीय आचार्यों और तिब्बती विद्यार्थियों के बीच गुरु–शिष्य परम्परा की शुरुआत थी। हालांकि, अधिकतर युवा तिब्बती लंबे, कठिन और खतरनाक रास्ते की यात्रा को पूरा करने में असफल रहे। उन सब में से थोन्मी सम्भोटा ही भारत पहुंचे और अनेक आचार्यों के चरणों में बैठ कर ज्ञान प्राप्त किया। थोन्मी सम्भोटा ने तिब्बत वापस पहुंच कर गुप्त लिपि के आधार पर तिब्बती लिपि का अविष्कार किया और संस्कृत की कई विशेषताओं के साथ तिब्बती व्याकरणिक ग्रंथ लिखे। उन्होंने कुछ बौद्ध धर्म ग्रंथों का अनुवाद भी शुरू किया और उनको तिब्बत के पहले लोत्सवा (अनुवादक) के रूप में याद किया जाता है।

तिब्बत के तीनों धर्म राजाओं के शासनकाल के दौरान, तिब्बती विद्यार्थी लगातार भारत आते रहे और नालंदा, विक्रमशिला, ओदान्तपुरी और वल्लभी जैसे प्रसिद्ध मठ विश्वविद्यालयों में पढ़ाई करते रहे। यद्यपि बहुत व्यवस्थित तरीके से तो नहीं पर बुद्ध की शिक्षाओं और महान भारतीय पंडितों के कार्यों का अनुवाद लगभग एक सदी तक जारी रहा और अनूदित शास्त्रों के कोष में वृद्धि हुई।

राजा त्रिसोंग देत्सेन (755–797 ई.) ने नालंदा विश्वविद्यालय के ज्ञानी शांतरक्षित को आमंत्रित किया, उसके बाद स्वात घाटी से पद्मसंभव को और नालंदा से कमलशिला को आमंत्रित किया। प्रसिद्ध साम्ये विहार को ओदान्तपुरी की तर्ज पर बनाया गया और संपूर्ण अनुदित कार्यों को फिर

से व्यवस्थित करने के लिए वहां पर अनुवाद विभाग की स्थापना की गई। राजा के संरक्षण में महाव्युत्पत्ति नामक संस्कृत–तिब्बती शब्दकोष की रचना की गई और धर्म के अनुवाद के मानकीकरण के लिए दिशानिर्देश बनाए गए। अपनी जनसंख्या के अनुपात में तिब्बतियों ने छः सदियों में सबसे अधिक बौद्ध साहित्य का अनुवाद किया। अनुदित शीर्षकों के नाम खुद ही इसकी महिमा का गुणगान करते हैं।

dkX;|j% c|) d s 'kCnk dk frCcrh vu|okn

काग्युर, बुद्ध के शब्दों के अनुवाद 11 सौ से अधिक शीर्षकों में समाहित हैं। काग्युर के अधिकांश संस्करण 500 से अधिक जिल्दों के 108 बड़े खण्डों में हैं। जो विनय, प्रज्ञापरमिता, अवताम्सका, तंत्र, धरामि आदि नामक विशयों के अंतर्गत वर्गीकृत किए गए हैं।

कई आचार्य और पंडित इस अनुवाद और मानकीकरण के महान कार्य को पूरा करने के प्रयास में शामिल रहे। जिनके नाम आचार्य कुसारा, ब्राम्हण शंकर, कश्मीर के अनु, नेपाल के शीलमंजु, बुद्धगुहाय, शांतिरक्षित, पद्मसंभव, योगाचार्य धर्म कीर्ति, कमलशिला, सुरेन्द्र बोधि, भारत के मिमी वर्मा, चीन के हुआशंग महादेवात्से आदि। यह सब तिब्बत में बौद्ध धर्म–प्रचार के पहले चक्र के दौरान हुआ।

बाद के धर्म–प्रचार के कालचक्र में और भी अधिक आचार्यों ने सहयोग किया जिनके नाम श्रीकर वर्मा, धर्मपा, पद्म गुप्त, दीपांगकरा, श्रीज्ञान, चन्द्र राहुल, गयाधर, जीनगुप्त आदि हैं। इस काम में लोत्सवा (तिब्बती अनुवादक) की बड़ी संख्या (230) ने भी सहयोग दिया। जिनके नाम थोन्मी सम्भोटा, क्हाचे आनंद, ब्हा एशे वान्पो, पगोर वरिओचना, सान बंदरक्षित, कवापलत्सेग, ल्हा लामा एशे–ओद, लोचेन रिन्चेन संग्पो, नग्त्सो त्सुलट्रीम ग्याल्वा, मार्पा चोएकी लोदोए, न्यीमा दोर्जे, बुतों थाम्चेद खेन्पा, शालू छोक्योंग सांग्पो और बहुत से लोग हैं। इन अमूल्य विरासतों को तिब्बत में सदियों से सहेज कर रखा हुआ है। भारत में रह रहे तिब्बती शरणार्थियों का सपना है कि वह इन्हें इनके स्रोत की भूमि पर वापस ला सकें। जो कि भारत को धन्यवाद कहने जैसा होगा।

rX;j% vkpk;k] ;kfx;k vkj ifMrk d dk;k dk frCcrh vuokn

तेंग्युर मुख्यतः भारत के बौद्ध विद्वानों, योगियों, और तर्कशास्त्रियों के करीब दस सदियों से अधिक के कार्यों का तिब्बती अनुवाद है। इसमें सौ से अधिक विद्वानों का कार्य शामिल है लेकिन प्रमुख रूप से नालंदा, विक्रमशिला, ओदान्तपुरी, वल्लभी और तक्षशिला के महान विद्वानों के साथ आचार्य नागार्जुन, आर्यदेव, बुद्धपलिता, भाव–विवेकर, चन्द्र कीर्ति, शांतिदेव, कमलशिला, असंग, वासुबंधु, दिग्नाग, धर्मकीर्ति, हरिभद्र, अतिशा के अलावा तमाम विद्वानों का कार्य सम्मिलित है।

तेंग्युर, 220 खण्डों और 3300 से अधिक शीर्षकों में समाहित है। जिनका वर्गीकरण स्रोतगण, तंत्र, प्रज्ञापरमिता मध्यमका, अभिधर्म, विनय, जातक, शब्दविद्या, चिकित्सा विद्या, नीति शास्त्र आदि विषयों में हुआ है। चूंकि यह सभी तिब्बती भाषा में हैं इसलिए विश्व की जनसंख्या का बहुत छोटा प्रतिशत इन्हें पढ़ सकता है।

हिमालयी क्षेत्र के तिब्बती, मंगोल और बौद्ध समुदाय इन्हें पढ़ सकते हैं। वर्तमान परिस्थियों के अंतर्गत मानव समाज के इस अमूल्य खजाने को तिब्बती लोग अकेले ही आने वाली कई सदियों तक संरक्षित नहीं कर सकेंगे। इसलिए तिब्बती लोग इस विरासत को भारत के साथ साझा करना चाहते हैं। उस भूमि को जो इनका श्रोत है।

4- orleku frCcrh fyfi dk lkr

तिब्बती इतिहासकारों में से अधिकतर ने माना है कि वर्तमान तिब्बती लिपि का अविष्कार थोन्मी सम्भोटा ने 7वीं सदी ईस्वी में किया था। तिब्बती लोगों के राजनैतिक और सामाजिक कल्याण को बढ़ावा देने के विचार से तिब्बती लिपि का अविष्कार करने के कारण के अलावा जो तात्कालिक कारण था, वह कई तिब्बती ऐतिहासिक दस्तावेजों में दर्ज है। तेरह वर्ष की उम्र में राजा सॉन्गत्सेन गाम्पो के राजतिलक समारोह में तिब्बत के पड़ोसी देशों के सभी शाही घरानों ने अपने प्रतिनिधियों को भेजा और साथ में शुभकामना संदेश, पत्र और उपहारों की सूचियों को अपनी भाषा में लिख कर भेजा।

चूंकि तिब्बत की अपनी लिखित भाषा नहीं थी, इसलिए राजा को उन सभी का जवाब उनकी भाषा में देना पड़ा या फिर मौखिक संदेश भेजना पड़ा। इसने उन्हें तिब्बत की अपनी लिपि की आवश्यकता के लिए प्रेरित किया। उन्होंने सोचा कि एक लिखित भाषा के बिना राज्य का नियंत्रण करना कठिन होगा और अन्य राज्यों द्वारा तिब्बत का उपहास भी किया जा सकता है। इसलिए उन्होंने थोन्मी सम्भोटा को भारतीय भाषाएं सीखने के लिए भारत भेजा।

कहा जाता है कि थोन्मी भारत में सात साल तक रहे और भारतीय भाषाओं का गहराई से अध्ययन किया। जब वह तिब्बत वापस लौटे तो उन्होंने मरुखा महल में रह कर भारतीय लिपि की तर्ज पर वर्तमान तिब्बती लिपि के मूलरूप का अविष्कार किया। लेकिन किस भारतीय लिपि की तर्ज पर तिब्बती लिपि बनाई गई थी उसके बारे में तिब्बती इतिहासकारों में एक मत नहीं है।

दो प्रमुख विचारों ने तिब्बती इतिहासकारों के मतों को विभाजित किया। पहला यह कि पहले के तिब्बती इतिहासकारों का मानना था कि तिब्बती लिपि भारतीय संस्कृत लिपि पर आधारित है। थोन्मी ने 'उ–छेन' लिपि का आविष्कार किया था और साथ ही एक और कश्मीरी लिपि पर आधारित 'उ–मे' लिपि का भी आविष्कार किया गया था। लेकिन समकालीन इतिहासकार, प्रसिद्ध इतिहासकार गेदुन छोफेल के विचार का अनुसरण करते हुए कहते हैं कि जब थोन्मी सम्भोटा को भारत भेजा गया था तब

भारत में गुप्त लिपि का व्यापक रूप से उपयोग होता था और थोन्मी ने गुप्त लिपि के आधार पर तिब्बती उ–छेन लिपि को आकार दिया था।

यह भी कहा जाता है कि उन्होंने तिब्बती जबान के लिए उपयुक्त होने के लिए सोलह भारतीय स्वरों को घटा कर चार तिब्बती स्वर और चौंतीस भारतीय व्यंजनों को घटा कर तेईस तिब्बती व्यंजन कर दिया। फिर आवश्यकता के अनुसार छः और व्यंजनों का अविष्कार किया। जैसा कि भारतीय भाषा में होता है उस तरह तिब्बती भाषा में अक्षर स्वर के हिसाब से काम नहीं करते। तो थोन्मी ने अक्षर को व्यंजन की श्रेणी में ही रखा।

इस तरह थोन्मी ने वर्तमान तिब्बती वर्णमाला की रचना सातवीं सदी में की। यदि कोई वर्तमान तिब्बती और भारतीय अक्षरों को एक दूसरे के करीब रख कर इन दोनों भाषा प्रणालियों पर एक स्पष्ट नजर डालता है, तो वह भारत और तिब्बत के बीच एक विशिष्ट भाषाई संबंध का पता लगाने में विफल नहीं होगा।

5- Hkk"kkbl lc/k dh :ij[kk

7वीं सदी में तिब्बती राजा सॉन्गत्सेन गाम्पो के अपनी लिखित लिपि होने की आवश्यकता के दूरदर्शी सोच की वजह से थोन्मी सम्भोटा को भारतीय भाषा लिपि सीखने के लिए भारत भेजा गया। भारत में उन्होंने भारतीय गुरु ब्राम्हण लिपिकार और देव विद्यासिंह के सानिध्य में रह कर भारतीय भाषाओं को सीखा। सात वर्षों के अथक परिश्रम से उन्होंने भारतीय भाषाओं और बौद्ध दर्शन पर विशेषज्ञता हासिल की। फिर तिब्बत लौट कर उन्होंने भारतीय वर्णमाला के आधार पर वर्तमान तिब्बती वर्णमाला को आकार देना शुरू किया।

थोन्मी ने न सिर्फ भारतीय लिपि के आधार पर तिब्बती वर्णमाला को आकार दिया बल्कि उस समय मौजूद भारतीय व्याकरणिक प्रणाली के आधार पर आठ तिब्बती व्याकरणिक ग्रंथों की रचना भी की। लेकिन ऐसा कहा जाता है कि दुर्भाग्यवश उन आठ व्याकरणिक ग्रंथों में से सिर्फ दो ही बच पाए, और बाकी छः ग्रंथ खो गए जिनके शीर्षक ही बचे रहे। तिब्बती इतिहासकार इस बात पर एक मत हैं कि थोन्मी के विद्वता की गतिविधियां ही भारत–तिब्बत भाषाई संबंध की शुरुआत थे।

राजशाही के अंत तक भारत–तिब्बत भाषाई संबंध सख्ती से बौद्ध धर्म ग्रंथों के अनुवाद की गतिविधियों तक सीमित रहे। तिब्बती भाषा में सुधार के बाद थोन्मी बौद्ध धर्म के दो ग्रंथों झमातोक और पंकोंचग्यपा के अनुवाद में लगे। यह दोनों ग्रंथ 27वें राजा ल्हा थो थो–री न्यंतत्सेन के शासनकाल में तिब्बत पहुंचे थे। हालांकि, राजा इन दोनों ग्रंथों के अर्थ को समझ नहीं सकते थे, इसलिए इनको पूजा के वस्तु के रूप में संरक्षित कर दिया जिसे आने वाले हर राजा को विरासत के रूप में दिया जाता था। माना जाता है कि तिब्बती में सबसे पहले अनुदित होने वाले ग्रंथ यही दोनों थे।

इस प्रकार थोन्मी ने भारत–तिब्बत के बीच अनुवाद कार्यों की नींव रखी। उन्होंने गुरु कुसारा और ब्राम्हण शंकर, नेपाल के गुरु शीलमंजु और चीन के गुरु महादेवत्से के साथ मिलकर अनके भारतीय और चीनी बौद्ध धर्म ग्रंथों का अनुवाद किया। उसके बाद या तो भारतीय गुरुओं के सहयोग से या फिर तिब्बती अनुवादकों ने स्वयं अनुवाद का जो कार्य

शुरू किया, वह करीब एक हजार साल तक चलता रहा। 8वीं सदी में राजा त्रिसोंग देत्सेन के शासनकाल के दौरान तिब्बती अनुवादक येशे वान्गपो और भारतीय गुरु शांतरक्षित के आग्रह पर राजा ने तिब्बत का पहला अनुवाद केंद्र उस समय नव–निर्मित साम्ये मठ में स्थापित किया। भारत–तिब्बत भाषाई संबंध को बढ़ाने और मजबूत करने में इस केंद्र ने महान सेवा दी। इसके अलावा बौद्ध धर्मग्रंथों के एक सटीक और कुशल अनुवाद के लिए संस्कृत में उच्च स्तर की प्रवीणता की आवश्यकता थी। उपर्युक्त अनुवाद केंद्र में संस्कृत भाषा भी पढ़ाई जाती थी। यह केंद्र तिब्बत में पहला संस्कृत शिक्षा केंद्र था।

राजा सॉन्गत्सेन गाम्पो और त्रिसोंग देत्सेन के शासनकाल के दौरान बड़ी संख्या में बौद्ध धर्म ग्रंथों का अनुवाद तिब्बती भाषा में हुआ। लेकिन यह सारे अनुवाद उल्लेखनीय दक्षता के साथ चीनी, संस्कृत और पाली के विभिन्न संस्करणों से किए गए थे। और इस गैरविभेदकारी तौर–तरीकों की वजह से विभिन्न असंगत संस्करणों के बौद्ध शब्दावली का गुप्त अतिक्रमण तिब्बती भाषा में हो गया और इससे तिब्बती शब्दार्थ–विज्ञान में विकृति आ गई।

814 ई. के आसपास ऋदे सॉन्गत्सेन के शासनकाल के दौरान प्रमुख तिब्बती अनुवादकों ने भारतीय विद्वानों के साथ मिलकर किसी भी अनियमितता और विकृति को मिटाने का कार्य किया और इस तरह बौद्ध धर्मग्रंथों के संस्कृत से तिब्बती अनुवाद के लिए पहला तिब्बती मार्गदर्शक सिद्धांत स्थापित किया जिसका नाम स्ग्रा–स्ब्योर बम–पो ग्निस–पा (एसएसबीपी) था।

आवश्यकताओं को देखते हुए एसएसबीपी को संस्कृत के व्याकरणिक विशेषताओं और शब्द–विन्यास के हर पहलू की विस्तृत व्याख्या करते हुए बनाया गया। इस मार्गदर्शक सिद्धांत ने तिब्बती अनुवाद कार्यों पर एक स्वस्थ्य प्रभाव डाला। अनुवाद के कार्यों की सराहना की गई और इन कार्यों का मूल्यांकन करने वालों ने प्रशंसा की। इसके अलावा, प्रमुख संस्कृत–तिब्बती अनुवादकों ने एकमत होकर कहा कि जब उन तिब्बती बौद्ध धर्मग्रंथों का अनुवाद फिर से संस्कृत में किया जाता है तो शब्दार्थ–विज्ञान में कोई त्रुटि नहीं पाई जाती। कोई भी अनुदित ग्रंथों को उनके मूलरूप संस्करण में किसी शब्दार्थ में चूक हुए बिना ला सकता

है। यह भारत–तिब्बत भाषाई संबंध की प्रगाढ़ता को दर्शाता है। इसने भारत के सबसे परिष्कृत दार्शनिक खजाने में से एक का प्रतिपादन कर एक महान सेवा किया है। तिब्बत में राजशाही के अंत के बाद भी बौद्ध धर्म ग्रंथों का अनुवाद होना कम नहीं हुआ। तिब्बत में बौद्ध धर्म के दूसरे प्रसार के समय विशेष रूप से भारतीय व्याकरणिक और काव्य साहित्यों की एक बड़ी संख्या का तिब्बती में अनुवाद हुआ। इसके साथ ही तिब्बती विद्वानों ने इन साहित्यों पर टिप्पणियां देकर भाष्य की रचना भी की थी।

भारत–तिब्बत संबंध प्रगाढ़ हुए और इस तरह तिब्बती भाषा भी समृद्ध हुई। कहा जाता है कि भारत में पहले दस व्यापक व्याकरणिक ग्रंथ थे। 11वीं सदी ई. के शुरुआत में दस में से चार ग्रंथों (कालपा व्याकरण, चन्द्रप्पा व्याकरण, सरस्वती व्याकरण और पाणिपा व्याकरण) और उन पर विभिन्न भारतीय विद्वानों द्वारा रचित भाष्यों का तिब्बती में अनुवाद हो चुका था। इन चारों ग्रंथों में प्रत्येक पर विभिन्न तिब्बती विद्वानों द्वारा अलग–अलग समय में अच्छी संख्या में भाष्य रचे गए। तिब्बती शैक्षणिक समुदाय में वर्तमान समय में भी तिब्बती भाषा के इन व्याकरण ग्रंथों से अध्ययन होता है। तिब्बती इन भारतीय व्याकरणिक ग्रंथों के अनुवाद के पहले से ही इनके बारे में जानते थे।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, तिब्बत के पहले अनुवादक थोन्मी सम्भोटा ने भारत में सात वर्षों के दौरान पाणिनि व्याकरण, कालपा व्याकरण और चंद्रप्पा व्याकरण जैसे व्याकरणिक ग्रंथों का अध्ययन किया था। बाद के सभी अनुवादकों ने भी भारतीय व्याकरणिक ग्रंथों का अध्ययन या तो भारत में किया या फिर तिब्बत में किया था। भारतीय गुरु काव्यादर्श के सानिध्य में काव्य पर बहुचर्चित ग्रंथ का तिब्बती में अनुवाद 13वीं सदी में हुआ और इसे पारंपरिक तिब्बती काव्य के प्रमुख सिद्धांतो के तौर पर स्थापित किया गया था।

कविता करने के लिए समृद्ध पर्यायवाची और रूपकों की शब्दावली की आवश्यकता पड़ती है, इसलिए 14वीं सदी में भारतीय गुरु अमर सिंह द्वारा रचित अमरकोष नामक संस्कृत शब्दकोष का तिब्बती में अनुवाद किया गया। कहा जाता है कि 13वीं सदी तक कोई भी पारंपरिक तिब्बती कविता ने काव्यादर्श द्वारा सुझाए गए सीमाओं को नहीं तोड़ा और तभी से ही पारंपरिक तिब्बती कविता में भारतीय भाषाओं से लिए गए पर्यायवाची

और रूपक शब्दावली में डूबी हुई होती थी। जैसा कि यह सार्वभौमिक रूप से दावा किया जाता है कि भारत के महान कवि कालिदास की प्रसिद्ध कविता मेघदूतम् दुनिया के सभी साहित्यिक दिग्गजों की कल्पना से कम नहीं थी, यह बात तिब्बत के लिए भी सही है। 14वीं सदी ई. में तिब्बतियों ने पहली बार मेघदूतम् का तिब्बती संस्करण देखा और तब से विभिन्न तिब्बती विद्वानों द्वारा आलोचनात्मक समीक्षाओं और टिप्पणियों की रचना की गई। ऐसी कविताओं की भी कमी नहीं थी जो कालिदास के मेघदूतम् में प्रदर्शित सुंदर काव्यात्मक लेखन का अनुसरण करती थीं।

फिर 15वीं सदी में तिब्बती कवियों के शिरोमणि कवि जांग–जुंग छोहवांग डाक्पा ने प्रसिद्ध भारतीय महाकाव्य रामायण को तिब्बती कविता में इतनी खुबसूरत शैली में कहा कि उसने तिब्बती काव्य में नया आदर्श स्थापित कर दिया। रामायण का तिब्बती अनुवाद 8वीं से 9वीं सदी के बीच हुआ था, लेकिन उस समय के तिब्बती विद्वानों का ध्यान इस महाकाव्य पर नहीं गया था। 10वीं सदी में प्रमुख तिब्बती अनुवादक रिन्छेन जान्गपो ने देवतिश्यस्रोता और वेशेश्स्तवाटिका (दोनों बुद्ध की प्रशंसा में लिखे गए) का अनुवाद किया और याद करें तो 13वीं सदी में काव्यादर्श और अमरकोष का तिब्बती में अनुवाद हुआ।

तिब्बती विद्वान धीरे–धीरे रामायण की तरफ उन्मुख हुए और साथ ही जांग–जुंग छोहवांग डाक्पा की कविता शैली में इस महाकाव्य का इतना सुंदर प्रदर्शन हुआ था कि इससे पूरे तिब्बत का ध्यान आकर्षित हुआ। ऐसा प्रतीत होता है कि पहले के तिब्बती विद्वानों ने महाभारत का तिब्बती में अनुवाद करने का प्रयास नहीं किया। लेकिन पहले के कई तिब्बती धर्मग्रंथ और साहित्यिक दस्तावेजों के भारत से किए गए अनुवाद में महाभारत की आंशिक कहानियों का जिक्र है।

19वीं सदी में, तिब्बती विद्वान ल्हामो येशी त्सुलट्रीम ने महाभारत की 152 श्लोकों में काव्य–रचना की जिसने बहुत से लोगों को आकर्षित किया। इसके कलात्मक सौन्दर्य की प्रशंसा आज तक जारी है। एक हजार से अधिक वर्षों में भारत–तिब्बत भाषाई संबंधों ने प्रगाढ़ता और विस्तार की पराकाष्ठा को छुआ है। भारत के हिमालयी क्षेत्रों लद्दाख, लाहौल और स्पीती से लेकर अरुणाचल प्रदेश और सिक्किम तक की भाषाओं में तिब्बती मूल आज भी गहराई से जुड़ा हुआ है।

6- Hkkjrh; _.k&frCcrh Hkk"kk d: 'kCn

तिब्बती बर्फीले पहाड़ों से घिरे, तिब्बत के ऊंचे पठार के निवासी हैं। माउंट एवरेस्ट और कैलाश पर्वत को भारतीय बहुत अच्छे तरीके से जानते हैं। कैलाश पर्वत और मानसरोवर झील हिंदुओं, बौद्धों और बॉन धर्म के अनुयायिओं के लिए तीर्थ स्थल हैं। देवी पार्वती के साथ भगवान शिव और कई अन्य देवता तिब्बत के पवित्र स्थलों में रहते हैं।

अपने प्राचीन सभ्यता, विज्ञान और दर्शन के साथ भारत लाखों वर्षों से कई चक्रवर्ती राजाओं, संतों, मनीषियों और दार्शनिकों की कर्मभूमि रहा है। कपिलवस्तु राज्य में ईसा पूर्व 6ठी सदी में राजकुमार सिद्धार्थ का जन्म हुआ। वर्षों तक ज्ञान की तलाश में लगे रहने के बाद उन्हें बोधगया में परम ज्ञान की प्राप्ति हुई और उन्होंने सारनाथ में अपना पहला उपदेश दिया। गौतम बुद्ध की शिक्षाएं भारत में खूब फैलीं और इनका प्रसार समुद्री रास्ते से आसपास के कई स्थानों: श्रीलंका, इंडोनेशिया, लाओस, कम्बोडिया, चीन, जापान, थाइलैंड, बर्मा तक हुआ।

हिमालय के पार बुद्ध की शिक्षा तब फैली, जब तिब्बती नरेशों ने इस दिशा में पहल की। उन्होंने कई युवा और होनहार तिब्बतियों को भारत में अध्ययन के लिए भेजा। इनमें से ज्यादातर की तो विशाल हिमालय पार करते हुए आने वाली कठिनाइयों की वजह से मौत हो गई। कई तो भारतीय मैदानों की भीषण गर्मियों की वजह से चल बसे। लेकिन कुछ जिंदा बचे रहे और वे उस समय के महान शिक्षकों से ज्ञान हासिल करने में सफल रहे। थोन्मी सम्भोटा ऐसे ही भाग्यशाली लोगों में से एक थे। उन्होंने संस्कृत भाषा और बौद्ध दर्शन के साथ ही धर्म के ज्ञान पर महारत हासिल की।

तिब्बत लौटने पर नरेश सॉन्गत्सेन गाम्पो ने थोन्मी सम्भोटा से कहा कि उन्होंने भारतीय भाषाओं का जो अध्ययन किया है, उसके आधार पर तिब्बती लिपि का विकास करें। गुप्त काल की लिपियों के आधार पर सम्भोटा एक नई तिब्बती लिपि का विकास करने में सफल रहे जिसमें 30 व्यंजन और 4 स्वर थे। इस लिपि के आधार पर न सिर्फ तिब्बती भाषा को लिखा जा सकता था, बल्कि किसी संस्कृत शब्द को भी लिखा जा सकता था। ऐसी ही प्राचीन लिपियों से तैयार देवनागरी में आज संस्कृत, हिंदी और कई

क्षेत्रीय भाषाएं लिखी जा सकती थीं। आज कई शताब्दियों के बाद भी आज हम कई अक्षरों के आकार का एक–दूसरे से मिलान कर सकते हैं। नौवीं सदी में बौद्ध धर्म तिब्बत में अपनी जड़ें जमाने लगा। भारतीय गुरु तिब्बत आए और तिब्बती भारत के असली चेला बन गए। तिब्बती नरेशों के संरक्षण में बुद्ध के उपदेशों (काग्यूर) और भारतीय महापंडित (तेंग्यूर) के अनुवाद का विशाल कार्य पूरा हुआ। भारतीय आचार्यों के मार्गदर्शन में शास्त्रार्थ आयोजित हुआ। काग्यूर में 100 से ज्यादा विशाल खंड और तेनग्यूर में करीब 220 खंड हैं। ये सभी तिब्बती भाषा में संरक्षित बौद्ध साहित्य के सबसे आधिकारिक स्रोत माने जाते हैं, जबकि भारत में खुद ज्यादातर इनके मूल ग्रंथ गायब हो चुके हैं। अनुवाद की प्रक्रिया में कई भारतीय शब्दों को अपना लिया गया और आगे चलकर वे ज्ञान के विभिन्न क्षेत्र में तिब्बती शब्द बन गए। ये तिब्बती भाषा में भारत से ग्रहण किए गए ऐसे कुछ शब्द आगे दिए गए हैं। हम भारत–तिब्बत संबंध के रोचक पहलू के हिसाब से इन पर नजर डालते हैं।

d½ frCcrh Hkk"kk e x j ck) xFk

सातवीं सदी में तिब्बती नरेश सॉन्गत्सेन गाम्पो ने थोन्मी सम्भोटा को संस्कृत सीखने के लिए भारत भेजा। भारत लौटने के बाद थोन्मी ने उस दौर में प्रचलित भारतीय लिपियों के आधार पर तिब्बती लिपि का विकास किया। धीरे–धीरे कई भारतीय साहित्य का अनुवाद तिब्बती भाषा में किया गया। त्रिसोंग देत्सेन ने अपने शासन के दौरान भारत से आचार्य शांतरक्षित और पद्मसंभव को बुलाया और इस दौरान कई तिब्बतियों को पहली बार बौद्ध संघ में दीक्षित किया गया।

बौद्ध ग्रंथों का तिब्बती में अनुवाद जारी रखने के लिए उन्होंने संस्कृत और बौद्ध ग्रंथों का अध्ययन किया। उन्होंने संस्कृत–तिब्बती का एक द्विभाषी शब्दकोष महाव्युत्पत्ति तैयार किया। बौद्ध ग्रंथों और भारतीय साहित्य का अनुवाद 12वीं और 13वीं शताब्दी तक जारी रहा। भारतीय भाषाओं से तिब्बती में अनुवाद किए गए कुछ ग्रंथों को काग्यूर और तेंग्यूर संग्रह में शामिल नहीं किया गया है। हालांकि, उन्हें दुनहौंग और अन्य विविध संग्रहों में शामिल नहीं किया गया।

ये ऐसा बहुमूल्य भारतीय खजाना है जिसे तिब्बतियों ने शताब्दियों से

संरक्षित करके रखा है। इन ग्रंथों का विषय नीति शास्त्र, व्याकरण, कविता, छंद आदि है। ऐसा लगता है कि तिब्बत में बौद्ध धर्म के शुरुआती प्रसार वाले दौर में किसी साझा विषय वाले ग्रंथ का तिब्बती में अनुवाद नहीं किया गया। शुरुआती तिब्बती ग्रंथसूची लदन कर मा और फांग थांग मा में ऐसे ग्रंथ की कोई सूची नहीं मिलती। हालांकि, तिब्बत में बौद्ध धर्म के प्रसार वाले दौर में कई साझे विषयों वाले ग्रंथों का अनुवाद किया गया। 13वीं सदी में शोंगतोन दोरजी ग्यालत्सेन (1235 से 1280 ईस्वी) ने दांडिनी के काव्यदर्श और अमर सिंह के अमरकोष का तिब्बती में अनुवाद किया और इसके अध्ययन की परंपरा शुरू की, जो कि आज भी काफी हद तक जिंदा है। इसी प्रकार मेघदूत का अनुवाद किया गया और उनका व्यापक अध्ययन किया गया।

अमरकोष और उसका टीका कामधेनु कविता को समझने के लिए अपरिहार्य जैसा है। इसलिए तिब्बती विद्वानों ने न केवल इन ग्रंथों के अध्ययन की परंपरा शुरू की, बल्कि उन्होंने इसी तरह के कई स्वतंत्र ग्रंथ भी लिखे।

औषधि के क्षेत्र में तिब्बतियों ने भारत के कई ग्रंथों का अनुवाद किया: योग शतक, जीवतुरा, अकरायंगरजुनभाषित, अवभेषजकल्प, वैद्यअष्टांगहरदयाव्रती, अष्टांग हृदय संहिता ऐसे ही कुछ ग्रंथ हैं। भारतीय आयुर्वेदिक प्रणाली की परंपरा को तिब्बतियों ने अच्छी तरह से संरक्षित और प्रसारित किया है और यह अब भी वहां प्रचलन में है।

भारत के सबसे महत्वपूर्ण साहित्य रामायण का तिब्बती में अनुवाद किया गया और दुनहुआंग कलेक्शन (पीटी 983, आईक्यू 737, डॉक्यूमेंट्स तिब्बतियन्स, बिबलियोथेक नेशनले, पेरिस, 1978) में उपलब्ध है। हालांकि, यह ग्रंथ कई टुकड़ों में है। तिब्बती विद्वानों ने अपने तमाम ग्रंथों में रामायण, महाभारत और विष्णु के 10 अवतारों के बारे में कई जगह उद्धरण दिए हैं।

तिब्बती विद्वानों के दिल में संस्कृत व्याकरण का काफी सम्मान है। स्रोत सामग्री का सही से लक्षित भाषा में अनुवाद करने के लिए यह अपरिहार्य था कि संस्कृत व्याकरण को सीखा जाए। कल्प व्याकरण, चंद्र व्याकरण और पाणिनी व्याकरण का भी तिब्बती भाषा में अनुवाद किया गया। भारतीय पंडित स्मृति ज्ञान ने तिब्बत की अपनी कुछ दिनों की यात्रा के

दौरान व्याकरण की एक पुस्तक लिखी, जो कि बाद में तिब्बत व्याकरण को समझाने के लिए तिब्बती व्याकरणविदों द्वारा सबसे ज्यादा संदर्भ दिए जाने वाली पुस्तक बनी। इसी प्रकार, आज भी तिब्बतियों द्वारा सरस्वती व्याकरण का अध्ययन किया जाता है। नीति शास्त्र में तिब्बती में जिस पुस्तक का सर्वप्रथम अनुवाद किया गया वह चाणक्य नीति थी। इसके अलावा नीतिशास्त्र की एक और पुस्तक प्रज्ञानआनंद का भी तिब्बतियों ने अध्ययन किया और उसका अनुवाद किया। कई तिब्बती विद्वानों ने नीति शास्त्र का अध्ययन किया ताकि बेहतर और सौहार्दपूर्ण समाज बनाने के लिए आम आदमी को नैतिक सोच और उसके दुनियावी प्रयासों में मदद की जा सके।

महान साक्य पंडित (1182–1251) ने एक बहुप्रशंसित पुस्तक लिखी थी जिसका नाम था सुरुचिपूर्ण कहावतों का खजाना। इसमें पंचतंत्र की कहानियों और अन्य भारतीय स्रोतों का हवाला दिया गया। 15वीं सदी में महान गुरु त्सोंगखपा के शिष्य जांगझुंगवा छोवांग डाकपा ने रामायण के आधार पर एक काव्य लिखा जिसे 'एक ऐसी कविता कहा गया जो गंधर्व नरेश के रगों में बसती थी।" बाद में न्गवागं तेनपा ग्यात्सो ने इस किताब के आधार पर एक खास टिप्पणी लिखी। हाल के तिब्बती विद्वान दोनडुप ग्याल (1953) ने रामायण के आधार पर एक काव्य लिखा है जिसमें छह अध्याय हैं। इस प्रकार कई गैर बौद्ध ग्रंथों का तिब्बती भाषा में अनुवाद तो 7वीं सदी पीछे तक मिल जाता है।

जिन गैर बौद्ध ग्रंथों का तिब्बती में अनुवाद हुआ है उनकी एक संक्षिप्त सूची इस प्रकार है।

vk;|on

1. योग शतक
2. जीवातुर
3. अकरायानागरर्जुनभाषित अवभेषजकल्प
4. वैद्यअस्टांगहरदयाव्रती
5. अष्टांगहरदयासम्हिता नामा
6. अष्टांगहरदयानामा वैदुर्यकभाष्य

7. पदार्थकंद्रिकाप्रभाष नामा अष्टांगहरदयाविव्रती
8. आर्यदेसमगधमाथुरक्षत्रियभीसककुनाथमन्या
9. आर्यदेयफहाब्डधिसागडंडसभेसजासमस्करा
10. आर्य मुकलकोसमाहौसाधाविली
11. आयुर्वेदसरवस्वसरासमग्रह
12. वैद्यसिद्धसरा
13. स्लिहहोत्रियस्वआयुर्वेदसंहिता नामा

0;kdj.k

1. व्याकरणसुबंत नामा
2. त्रिप्रत्ययभास्य
3. सुबंतरत्नाकर नामा
4. धातुकाया
5. कंद्रोनादिवर्तिति नामा
6. उनाडि
7. त्याद्यंतिक्रियापादरोहना नामा
8. उनादिवर्तिती
9. कलापोनदिसूत्र
10. धातुसूत्र
11. सरस्वतीव्याकरणसूत्र
12. व्याकरणमहाशास्त्रसरस्वतीव्याकरणअवर्तितीप्रक्रियाकतुरनामा
13. कल्पधातुसूत्र
14. पाणिनीव्याकरणसूत्र
15. शब्दशास्त्र
16. अष्टमहापदामुला
17. सिस्यहिता व्याकरणकलपसूत्रव्रिति

18. स्याद्यंतप्रक्रिय

19. कल्पसूत्रव्रिति स्यादिविभक्तिप्रक्रिया

dk0; x|Fk

1. मेघदूत

2. रामायण

3. काव्यदर्श

pnk vkj dklk lkfgR;

1. छोदोरत्नाकर

2. अधिधननशास्त्रविस्वलोकन नामा

3. एकाशब्दअबाहावार्ताप्रवर्तनभिधननमणिमाला

4. देवस्वरादिस्तानियामहासहितागणपितसमुद्रफलप्रयोग

5. अमरकोष

6. अमरकोशसटीककामधेनु नामा

f'kYi o|

1. रससिद्धिशास्त्र नामा

2. रसायनशास्त्रोधृति

uhfr 'kkL=

1. नीतिशास्त्रप्रज्ञानदंड नामा

2. नीतिशास्त्रजंतुपोसनाबिंदु नामा

3. चाणक्यनीतिशास्त्र

4. नीतिशास्त्र

vU; fo"k;

1. तनुविचरणशास्त्रसमकेस्पा

2. समुद्रिकानामा तनुलक्षणपरिस्का

[k½ frCcr esa dkO; dfr;ksa dk mHkkj

दुनिया में अध्ययन के विभिन्न क्षेत्रों के प्राथमिक स्रोत के रूप में भारत प्रख्यात है। तिब्बत में अध्ययन के कई प्रमुख और गौण क्षेत्र भी मूलतः भारत से आए हैं और उनका अनुवाद किया गया है। हालांकि, तिब्बत में सौंदर्यशास्त्र संबंधी रचनाओं का इतिहास 7वीं सदी या उससे काफी पहले का है। तिब्बत में व्यापक काव्यात्मक सिद्धांत की अवधारणा आचार्य डांडी द्वारा काव्यदर्श के अनुवाद से हुई।

ये काव्यात्मक सिद्धांत तिब्बत में इतने ज्यादा प्रसिद्ध हुए कि एक हजार से ज्यादा टिप्पणियों और अनुप्रयोगों का उभार हुआ, जो कि भारतीय–तिब्बत साहित्य के इतिहास में अभूतपूर्व महत्व के साबित हुए। यह तथ्य तिब्बत में अनुवाद के ऐसे ग्रंथों के महत्व और सफलता को दर्शाता है।

तिब्बत में काव्य सिद्धांत के उभार का संक्षिप्त लेखाजोखा पेश करें तो 12वीं सदी में काव्य सिद्धांत के ग्रंथ काव्यदर्श का आंशिक अनुवाद तिब्बती भाषा में साक्य पंडित द्वारा अपनी पुस्तक 'छात्रवृत्ति का द्वार' में किया गया। इसके बाद सॉन्गत्सेन ग्यालत्सेन द्वारा काव्य ग्रंथ काव्यदर्श और लक्ष्मीकला का पूरा अनुवाद साक्य वंश की पीठ पर किया गया। इसके बाद काव्य रचना की कला तिब्बत में एक अलग विधा बन गई।

चौदहवीं सदी में काव्यदर्श पर पहली टिप्पणी लोदोए तेनपा द्वारा पैंगटिक शीर्षक से लिखी गई और इसके बाद कई शुरुआती टिप्पणियां जैसे नारथांग के लैकपे धोनडुप की आईं। उस समय की सबसे प्रसिद्ध टिप्पणियों में से एक थी रिनपुंग जिगदक की मिजिक सेंगे की, जिसे कि तिब्बत में काफी महत्व मिला। 17वीं सदी में दो सबसे मांग वाली टिप्पणियां थीं 5वें दलाई लामा द्वारा लिखी गई यांगछेन ग्येसलू और मिफम गेलेक द्वारा लिखी गई डांडी गोंग्येन। इन टिप्पणियों में कई प्रमुख विशेषताएं जोड़ी गईं जैसे सटीकता, अभिव्यक्ति की स्पष्टता और विचारों की बोधगम्यता, हालांकि ये अपने प्रकृति के हिसाब से अपने आप में संपूर्ण थीं।

18वीं सदी में सबसे प्रमाणिक और गहन टिप्पणी सामने आई। सितु पनछेन के सबसे महत्वपूर्ण शिष्य खमत्रुल चोस्क्यी निमा द्वारा लिखित इस ग्रंथ का शीर्षक था– यांगछेन न्गागी रोलत्सो। इसके बाद जु मिफाम लिखित यांगछेन ग्येस्पी रोलत्सो, ओग्येन तेनजिन द्वारा लिखित लोसाल

बुंगवा रोल्पा जैसी बाद में आई कई टिप्पणियां भी चर्चित रहीं। बीसवीं सदी में तिब्बत के भीतर और बाहर तिब्बती विद्वानों द्वारा कई नई टिप्पणियां लिखी गईं, जिनमें सत्संग लोबसांग पालदेन द्वारा लिखित त्सागसेज शेडपे दयांग का उल्लेख किया जा सकता है। इस संक्षिप्त लेखाजोखा से यह पता चलता है कि किस प्रकार तिब्बती विद्वानों ने भारतीय काव्य रचना की कला को अपनाया।

x½ frCcr e Ik;k;okph 'kCnk ij vk/kkfjr xFkk dh jpuk

12वीं सदी में साक्य पनछेन ने यह अनुभव किया कि संस्कृत के पर्यायवाची शब्दों पर तिब्बती में काम करना जरूरी है, इसलिए उन्होंने पहली बार अमरकोष के पहले अध्याय का तिब्बती भाषा में अनुवाद किया। इस ग्रंथ का नाम था त्सिगतेर और इसने अध्ययन के इस खास क्षेत्र के तिब्बत में उभार का रास्ता खोला। अमरकोश की रचना प्रसिद्ध भारतीय विद्वान अमर सिंह द्वारा चौथी सदी में की गई थी और इससे आलोचकों द्वारा काफी पसंद किया गया था। इसके बाद कई भारतीय विद्वानों ने पर्यायवाची शब्दों पर आधारित कई ग्रंथ लिखे और उन्हें मुख्यतः अमरकोष से ही प्रेरणा मिली थी। इस टिप्पणी का पहली बार तिब्बती में अनुवाद यारलो धकपा ग्यालत्सेन ने किया।

पर्यायवाची शब्दों पर आधारित पहले ग्रंथ त्सिगतेर में कई प्रमुख विशेषताएं जैसे सादगी और अभिव्यक्ति की स्पष्टता आदि समाहित थीं, जिसकी वजह से यह तिब्बत में जल्दी ही लोकप्रिय हो गया। चौदहवीं सदी में नार्थांग लोडोज तेनपा ने पहली बार त्सिगतेर पर एक टिप्पणी की रचना की और उस पर अच्छी प्रतिक्रिया मिली, जल्दी ही यह पूरे तिब्बत में प्रसिद्ध हो गया। इसके बाद लॉन्गछेन का मेतोग थेंगवा और नारथांग सांगा श्री का पेडकर थिंगवा भी चर्चित रहा।

अमरकोष पर सबसे प्रसिद्ध टिप्पणी राबरजोर दावा द्वारा लिखी गई जिसका शीर्षक था दोदजोई बा। 16वीं सदी में शालू छोस्क्योंग सांगपो ने तिब्बती भाषा में एक टिप्पणी का अनुवाद किया जिसका शीर्षक था लेगशेड कुनफेन दोदजो। इसके बाद तिब्बत में पर्यायवाची शब्दों पर कई ग्रंथ आए। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण ग्रंथ हैं– जामयांग क्येंत्से वांगपो द्वारा लिखित लोसाल नाग्येन, पालखांग का त्गोत्सार थिंगवा, पंडित पालजिन

दे का मुतीक थिंगवा, तेनजिन ग्यालत्सेन का शेसराब, सितु पंछेन का गोग्याजेडपी देमिग, तेनजिन ग्यालत्सेन का पेडकर छुनपो, न्गुलछू छोसांग का ग्यात्सोए चुथिग, तेनजिन ग्यालत्सेन का सेरक्यी देमिग आदि।

?k½ lLd`r e‍s lajf{kr ;k fgUnh e‍s vuqfnr ckS) xzUFk

बौद्ध ग्रंथों का मुख्यतः संस्कृत से संगठित अनुवाद सातवीं सदी से शुरू हुआ। विशाल खंडों वाले 6000 से ज्यादा अनुदित ग्रंथ मौजूद हैं। लेकिन दुर्भाग्य से बुद्ध की जन्मभूमि भारत में विभिन्न वजहों से ऐसे तमाम ग्रंथ लुप्त हो चुके हैं। आज तिब्बती अनुवाद ही सबसे प्रमाणिक और भरोसेमंद स्रोत अध्ययन के लिए रह गए हैं। इसलिए सारनाथ के केंद्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान ने 1980 में इन ग्रंथों के 'पुनरोद्धार' का कार्यक्रम हाथ में लिया और आज तक संस्कृत में करीब 30 ग्रंथों को फिर से बहाल किया गया और 80 ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद किया गया। यह संख्या हर साल बढ़ती जा रही है।

¼d½ iquZ#}kj gksus okys xzUFkksa dh lwph

1. སློབ་དཔོན་སེངྒེ་བཟང་པོས་མཛད་པའི་མངོན་པར་རྟོགས་པའི་རྒྱན་གྱི་འགྲེལ་པ་དོན་གསལ།

   अभिसमयालङ्कारवृत्तिः स्फूटार्था

2. དྲི་མ་མེད་པར་གྲགས་པའི་མདོ།

   विमलकीर्तिनिर्देशसूत्र

3. རྡོ་རྗེ་གཅོད་པའི་མདོ་དང་། འཕགས་པ་ཐོགས་མེད་ཀྱིས་མཛད་པའི་རྡོ་རྗེ་གཅོད་པའི་འགྲེལ་པ།

   वज्रच्छेदिका प्रज्ञापारिमतासूत्र तथा आचार्य असङ्गकृत त्रिंशतिकाकारिकासप्ततिः

4. དཔལ་དཱིཔཾཀརཤྲཱིཛྙཱནས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་ལམ་གྱི་སྒྲོན་མ།

   आचार्य दीपंकरश्रीज्ञानविरचितःबोधिपथप्रदीपः

5. འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་སྟོང་ཉིད་བདུན་ཅུ་པ་དང་དེའི་རང་འགྲེལ།

शून्यतासप्ततिः आचार्यनागार्जुनप्रणीता स्वोपज्ञवृत्त्या समन्विता।

6. སློབ་དཔོན་ཀ་མལ་ཤཱི་ལས་མཛད་པའི་སྒོམ་རིམ་ཐོག་མཐའ་བར་གསུམ།

आचार्यकमलशीलप्रणीतःभावनाक्रमः

7. རིན་ཆེན་འབྱུང་གནས་ཞི་བའི་ཞབས་ཀྱིས་མཛད་པའི་སྡེབ་སྦྱོར་རིན་ཆེན་འབྱུང་གནས་དང་བཅས།

कलिकालसर्वज्ञरत्नाकरशान्तिपादप्रणीतः छन्दोरत्नाकरः स्वोपज्ञवृत्त्या समन्वितः

8. མགོན་པོ་བྱམས་པས་མཛད་པའི་ཆོས་དང་ཆོས་ཉིད་རྣམ་པར་འབྱེད་པའི་ཚིག་ལེའུར་བྱས་པ་དང་དབྱིག་གཉེན་གྱིས་མཛད་པའི་འགྲེལ་པ།

मतैयनाथिवरिचताधमरधमरतविभङकारिकावसुबनधु–कृतवृतिसमिनवता।

9. ཨ་ཏི་ཤས་མཛད་པའི་ཆོས་ཚན་བཅུ་གཅིག

अतीशिवरिचता एकादशग्रन्थाः

10. སློབ་དཔོན་ཀཱ་མལ་ཤཱིལས་མཛད་པའི་འཕགས་པ་ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་རྡོ་རྗེ་གཅོད་པ་ཞེས་བྱ་བའི་རྒྱ་ཆེར་འགྲེལ།

आर्यप्रज्ञापारमितावज्रच्छेदिकासूत्रम् एवं आचार्य–कमलशीलविरचिता आर्यप्रज्ञापारमितावज्रच्छेदिकाटीका।

11. སློབ་དཔོན་ཆོས་གྲགས་ཀྱིས་མཛད་པའི་རྒྱུད་གཞན་གྲུབ་པ་དང་། འདུལ་བ་ལྷས་མཛད་པའི་རྒྱུད་གཞན་གྲུབ་པའི་འགྲེལ་བཤད།

आचार्यधर्मकीर्तिविरचिता सन्तानान्तरसिद्धिः, श्रीविनीतदेवकृत सन्तानान्तर सिद्धिटीकासहिता

12. རྒྱུད་གཞན་གྲུབ་པ་དང་། རྒྱུད་གཞན་གྲུབ་པའི་འགྲེལ་བཤད།

सन्तानान्तरसिद्धिः सन्तानान्तर सिद्धिटीकासहिता

13. འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཞབས་ཀྱིས་མཛད་པའི་རྟེན་འབྲེལ་སྙིང་པོ་རྩ་འགྲེལ་དང་། འཕགས་པ་ཆོས་ཀྱི་དབྱིངས་ཀྱི་སྙིང་པོའི་རྣམ་པར་འགྲེལ་པ་བཅས།

आचार्य नागार्जुन–प्रणीत प्रतीत्यसमुत्पादहृदय एवं आर्यधर्मधातुगर्भविवरण।

14. དཔལ་དཱི་པཾ་ཀ་ར་ཤྲཱི་ཛྙཱ་ནས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་ལམ་གྱི་སྒྲོན་མ།

बोधिपथप्रदीपःआचार्य दीपङ्कर श्रीज्ञानविरचितः

15. ཇོ་བོ་རྗེས་མཛད་པའི་གཞུང་ཚན་ལྔ།

आचार्य दीपङ्करश्रीज्ञान प्रणीत पञ्च ग्रन्थ संग्रह।

16. कृष्णपाद तेल्लोपाद दोहाकोषगीति

17. ཇོ་བོ་རྗེ་དཔལ་ལྡན་ཨ་ཏི་ཤས་མཛད་པའི་བདེན་པ་གཉིས་ལ་འཇུག་པ་ལ་སོགས་པའི་གཞུང་ཚན་བཞི

अतिशदीपङ्कर श्रीज्ञानप्रणीतम् सत्यद्वयावतारादिग्रन्थचतुष्टयम्

18. སློབ་དཔོན་ཀ་མ་ལ་ཤཱི་ལས་མཛད་པའི་དབུ་མ་སྣང་བ།

आचार्यकमलशीलप्रणीतःमध्यमकालोकः

19. འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དང་དེའི་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ

आर्यत्रिस्कन्धसूत्रं टीकात्रयसंवलितम्

20. སློབ་དཔོན་མཆོག་སྲེད་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཚིགས་སུ་བཅད་པ་བརྒྱ་པ།

आचार्यवररुचिकृतशतगाथा

21. མགོན་པོ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་འཕགས་པ་སཱ་ལུ་ལྗང་པའི་ཚིག་ལེའུར་བྱས་པ་དང་དེའི་རྒྱ་ཆེར་འགྲེལ།

आचार्यनागार्जुनप्रणीतासटीका आर्यशालिस्तम्बककारिका।

22. སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་བཤེས་པའི་སྤྲིང་ཡིག་དང་སློབ་དཔོན་བློ་གྲོས་ཆེན་པོས་མཛད་པའི་དེའི་རྒྱ་ཆེར་བཤད་པ་ཚིག་གསལ།

आचार्यनागार्जुनविरचितः सुहृल्लेखः आचार्यमहामतिविरचिता व्यक्तपदाटीका च।

23. སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་བྱང་ཆུབ་བཟང་པོ་དང་ནག་པོ་ཞབས་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་ཚོགས་ཀྱི་ལེའུ་ཞེས་བྱ་བ་གཞུང་ཚན་གཉིས།

आचार्यबोधिभद्र–कृष्णपाद–विरचितौ समाधिसम्भारपरिवर्तौ।

24. ཆོས་ཀྱི་སྡོམ་བཞི་བསྟན་པའི་མདོ། འཕགས་པ་ཀླུའི་རྒྱལ་པོ་རྒྱ་མཚོས་ཞུས་པའི་མདོ་བསྡུས་པ།

चतुर्धर्मोद्दानसूत्र (संक्षिप्त आर्यसागरनागराजपरिपृच्छासूत्रम्)

25. སློབ་དཔོན་ཟླ་བ་གྲགས་པས་མཛད་པའི་དབུ་མ་ལ་འཇུག་པའི་སེམས་བསྐྱེད་དང་པོ་ལྔའི་བཤད་པ།

आचार्यचन्द्रकीर्तिविरचितःस्ववृत्तिसहितः मध्यमकावतारः (परिच्छेदाः 1–5)

26. སློབ་དཔོན་འཕགས་པ་ལྷས་མཛད་པའི་ཡེ་ཤེས་སྙིང་པོ་ཀུན་ལས་བཏུས་པ་དང་། སློབ་དཔོན་བྱང་ཆུབ་བཟང་པོས་མཛད་པའི་ཡེ་ཤེས་སྙིང་པོ་ཀུན་ལས་བཏུས་པའི་བཤད་སྦྱར

ज्ञानसारसमुच्चयः एवं ज्ञानसारसमुच्चयनिबन्धनम् (आर्यदेवकृतम्)

27. སློབ་དཔོན་འཕགས་པ་ཐོགས་མེད་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་བསྡུས་པ།

आचार्यअसङ्गकृत महायान संग्रह।

28. སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་མདོ་ཀུན་ལས་བཏུས་པ།

आचार्यनागार्जुनविरचितः सूत्रसमुच्चयः

fgnh e vuqokn dk;

བོད་སྐད་ནས་ཧིན་སྐད་དུ་པར་བསྒྱུར་བཞུས་པའི་དཔེ་ཐོ་གཤམ་གསལ།

1. བོད་སྐད་སློབ་དེབ།

   तिब्बतीपाठमाला

2. དྲི་མ་མེད་པར་གྲགས་པས་བསྟན་པའི་མདོ།

   विमलकीर्तिनिर्देशसूत्र

3. རྡོ་རྗེ་གཅོད་པའི་མདོ་དང་། འཕགས་པ་ཐོགས་མེད་ཀྱིས་མཛད་པའི་རྡོ་རྗེ་གཅོད་པའི་འགྲེལ་པ།

   वज्रच्छेदिका प्रज्ञापारमितासूत्र तथा आचार्य असङ्गकृत त्रिंशतिकाकारिकासप्ततिः

4. སློབ་དཔོན་མི་འཇིགས་སྦྱིན་གྱིས་མཛད་པའི་གྲུབ་ཐོབ་བརྒྱད་ཅུ་རྩ་བཞིའི་ལོ་རྒྱུས།

   चौरासी सिद्धों का वृत्तान्त

5. རིགས་པ་ལ་འཇུག་པའི་མདོ། ཧ་རི་བྷདྲསུརིས་མཛད་པའི་རིགས་པ་ལ་འཇུག་པའི་འགྲེལ་པ།

   न्यायप्रवेशसूत्रम् हरिभद्रसूरिकृत न्यायप्रवेशवृत्ति सहितम्

6. འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་སྟོང་ཉིད་བདུན་ཅུ་པ་དང་དེའི་རང་འགྲེལ།

   शून्यतासप्ततिःआचार्यनागार्जुनप्रणीता स्वोपज्ञवृत्त्या समन्विता

7. སློབ་དཔོན་ཀམལཤཱི་ལས་མཛད་པའི་སྒོམ་རིམ་ཐོག་མཐའ་བར་གསུམ།

   आचार्य कमलशीलप्रणीतः भावनाक्रमः

8. འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཆོས་ཡང་དག་པར་བསྡུས་པ།

   आचार्य नागार्जुन प्रणीतःधर्मसंग्रहः

9. དགེ་བའི་དབང་པོས་མཛད་པའི་མུ་ཏིག་འཁྲི་ཤིང་གི་རྟོགས་བརྗོད།

क्षेमेन्द्रप्रणीतम् मुक्तालतावदानम्

10. རིན་ཆེན་འབྱུང་གནས་ཞི་བའི་ཞབས་ཀྱིས་མཛད་པའི་སྡེབ་སྦྱོར་རིན་ཆེན་འབྱུང་གནས་རང་འགྲེལ་དང་བཅས།

कलिकालसर्वज्ञरत्नाकरशान्तिपादप्रणीतः छन्दोरत्नाकरः स्वोपज्ञवृत्त्या समन्वितः

11. མགོན་པོ་བྱམས་པས་མཛད་པའི་ཆོས་དང་ཆོས་ཉིད་རྣམ་པར་འབྱེད་པའི་ཚིག་ལེའུར་བྱས་པ་དང་དབྱིག་གཉེན་གྱིས་མཛད་པའི་འགྲེལ་པ།

मैत्रेयनाथविरचिता धर्मधर्मताविभङ्गकारिका वसुबन्धुकृत वृत्तिसमन्विता

12. འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་འགྲེལ་དང་། སློབ་དཔོན་ཀ་མལཤཱིལས་མཛད་པའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་བསྒོམ་པ།

आचार्य नागार्जुन–प्रणीत बोधिचित्त–विवरण एवं आचार्य कमलशील–प्रणीत बोधिचित्त–भावना।

13. ཨ་ཏི་ཤས་མཛད་པའི་ཆོས་ཚན་བཅུ་གཅིག

अतीशविरचिता एकादशग्रन्थाः

14. འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཆོས་ཡང་དག་པར་བསྡུས་པ།

आचार्य नागार्जुनप्रणीतः धर्मसंग्रहः

15. སློབ་དཔོན་རིག་པའི་འབྱུང་གནས་ཞི་བས་མཛད་པའི་རྟོག་གེའི་ཐེམ་སྐས།

आचार्य विद्याकरशान्तिविरचितम् तर्कसोपानम

16. रत्नकीर्ति विरचित अपोहसिद्धिः

17. སློབ་དཔོན་རྟ་དབྱངས་ཀྱིས་མཛད་པའི་སངས་རྒྱས་ཀྱི་སྤྱོད་པ།

अश्वघोष विरचित बुद्धचरितम्

18. སློབ་དཔོན་བྷརྟྲྀཧརིས་མཛད་པའི་ལུགས་བརྒྱ་པ།

आचार्य भर्तृहरिप्रणीत नीतिशतकम्

19. བོད་ཀྱི་་བརྡ་སྤྲོད་སློབ་དེབ།

संभोटव्याकरण

20. སློབ་དཔོན་བསྒྲོད་དཀའ་སེ་ཧྣྲེས་མཛད་པའི་ཀ་ལཱཔའི་ཨུཎ་སོགས་ཀྱི་འགྲེལ་པ།

कातन्त्रोणादिसूत्रवृत्तिः (तिब्बती)

21. འཕགས་པ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཞབས་ཀྱིས་མཛད་པའི་རྟེན་འབྲེལ་སྙིང་པོའི་རྒྱ་འགྲེལ་དང་། འཕགས་པ་ཆོས་ཀྱི་དབྱིངས་ཀྱི་སྙིང་་པོའི་རྣམ་པར་འགྲེལ་པ་བཅས།

आचार्य नागार्जुन–प्रणीत प्रतीत्यसमुत्पादहृदय एवं आर्यधर्मधातुगर्भविवरण।

22. ཇོ་བོ་རྗེས་མཛད་པའི་གཞུང་ཚན་ལྔ།

आचार्य दीपङ्करश्रीज्ञान प्रणीत पञ्च ग्रन्थ संग्रह।

23. कृष्णपाद तेल्लोपाद दोहाकोशगीति

24. आचार्यदिङ्नागप्रणीतं न्यायप्रवेशकसूत्रम् आचार्यहरिभद्रसुरिकृतया न्यायप्रवेशवृत्त्या, पार्श्वदेवगणिकृतया पञ्जिकया भाषानुवादेन च समलङ्कृतम्

25. དགེ་སློང་སྙན་ངག་མཁན་ཆེན་པོ་བཙུན་པ་སློབ་དཔོན་རྟ་དབྱངས་ཀྱིས་མཛད་པའི་མཛེས་དགའ་བོའི་སྙན་ངག་ཆེན་པོ།

आचार्य अश्वघोष विरचित सौन्दरनन्द महाकाव्य

26. སྙན་ངག་མཁན་པོ་ཇོ་བོ་ཉི་དབང་མགོན་པོས་མཛད་པའི་གླུ་ཐལ་སྦྱར་མ།

गीताञ्जली

27. ཇོ་བོ་རྗེ་དཔལ་ལྡན་ཨ་ཏི་ཤས་མཛད་པའི་བདེན་པ་གཉིས་ལ་འཇུག་པ་ལ་

སོགས་པའི་གཞུང་ཚན་བཞི།

अतिशदीपङ्कर श्रीज्ञानप्रणीतम् सत्यद्वयावतारादिग्रन्थचतुष्टयम्

28. འཕགས་པ་ཕུང་པོ་གསུམ་པའི་མདོ་དང་དེའི་རྒྱ་འགྲེལ་གསུམ།

आर्यत्रिस्कन्धसूत्रं टीकात्रयसंवलितम्

29. བདག་ཉིད་ཆེན་པོ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་བསྟོད་པ་རྣམ་པ་བཞི།

आचार्यनागार्जुनविरचितः चतुःस्तवः

30. སློབ་དཔོན་མཆོག་སྲེད་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཚིགས་སུ་བཅད་པ་བརྒྱ་པ།

आचार्य वररुचिकृत शतगाथा

31. མགོན་པོ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་འཕགས་པ་སཱ་ལུ་ལྗང་པའི་ཚིག་ལེའུར་བྱས་པ་དང་དེའི་རྒྱ་ཆེར་འགྲེལ།

आचार्यनागार्जुनप्रणीता सटीका आर्यशालिस्तम्बककारिका

32. ཐར་འབྱུང་སྦས་པས་མཛད་པའི་རྟོག་གེའི་སྐད།

आचार्यमोक्षाकरगुप्तविरचित तर्कभाषा

33. སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་བྱང་ཆུབ་བཟང་པོ་དང་ནག་པོ་ཞབས་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་ཚོགས་ཀྱི་ལེའུ་ཞེས་བྱ་བ་གཞུང་ཚན་གཉིས།

आचार्यबोधिभद्र–कृष्णपाद–विरचितौ समाधिसम्भारपरिवर्तौ

34. ཆོས་ཀྱི་སྡོམ་བཞི་བསྟན་པའི་མདོ།འཕགས་པ་ཀླུའི་རྒྱལ་པོ་རྒྱ་མཚོས་ཞུས་པའི་མདོ་བསྡུས་པ།

चतुर्धर्मोद्दानसूत्र (संक्षिप्त आर्यसागरनागराजपरिपृच्छासूत्रम्)

35. སློབ་དཔོན་ཟླ་བ་གྲགས་པས་མཛད་པའི་དབུ་མ་འཇུག་པ་སེམས་བསྐྱེད་དང་པོ་ལྔའི་བཤད་པ།

आचार्यचन्द्रकीर्तिविरचितः स्ववृत्तिसहितः मध्यमकावतारः (परिच्छेदाः 1–5)

36. དྲང་སྲོང་ཆེན་པོ་མེ་བཞིན་འཇུག་གིས་མཛད་པའི་ཙ་ར་ཀའི་བསྡུ་བ། བོད་དང་པོ།

महर्षिणा अग्निवेशेन प्रणीता चरकसंहिता (प्रथमो भागः)

37. སློབ་དཔོན་དཔའ་བོས་མཛད་པའི་ཡན་ལག་བརྒྱད་པའི་སྙིང་པོ་བསྡུས་པའི་འགྲེལ་པ་ཚིག་ཉུང་དོན་གསལ། བོད་དང་པོ།

आचार्यवाग्भट्टविरचितस्य अष्टाङ्गहृदयस्य अल्पपदस्फुटार्थः वृत्तिः (प्रथमो भागः)

38. མཆོད་རྟེན་དང་ཚ་ཚ་གདབ་པའི་ཆོ་གའི་གཞུང་གསུམ་ཕྱོགས་བཏུས།

चौत्य–संचकयोर्निर्माणविधिसंग्रहः

39. སློབ་དཔོན་རྟ་དབྱངས་ཀྱིས་མཛད་པའི་རྡོ་རྗེའི་ཁབ།

आचार्य अश्वघोषकृत वज्रसूची

40. སློབ་དཔོན་འཕགས་པ་ལྷས་མཛད་པའི་ཡེ་ཤེས་སྙིང་པོ་ཀུན་ལས་བཏུས་པ་དང་། སློབ་དཔོན་བྱང་ཆུབ་བཟང་པོས་མཛད་པའི་ཡེ་ཤེས་སྙིང་པོ་ཀུན་ལས་བཏུས་པའི་བཤད་སྦྱར།

ज्ञानसारसमुच्चयः एवं ज्ञानसारसमुच्चयनिबन्धनम् (आर्यदेवकृतम्)

41. ནང་པའི་སྡེ་པ་གསུམ་གྱི་ཆོས་འཁོར་གྱི་མདོ་དང་། འཕགས་པ་གནས་བརྟན་སྡེ་པའི་མདོ་གསུམ།

बौद्धों के तीन निकायों के धर्मचक्रप्रवर्तनसूत्र एवं स्थविरवाद के तीन सुत्त

42. སློབ་དཔོན་ཀམལ་ཤཱི་ལས་མཛད་པའི་འཕགས་པ་སཱ་ལུ་ལྗང་པ་རྒྱ་ཆེར་འགྲེལ་པ།

आर्यशालिस्तम्बसूत्र एवं आचार्य कमलशील विरचित बृहट्टीका

43. སློབ་དཔོན་ཆོས་གྲགས་ཀྱི་ཚད་མ་རིགས་ཐིགས་དང་། དེའི་འགྲེལ་པ་སློབ་དཔོན་ཆོས་མཆོག་གིས་མཛད་པ།

आचार्य धर्मकीर्ति विरचित न्यायबिन्दु एवं धर्मोत्तर टीका

44. སློབ་དཔོན་འཕགས་པ་ཐོགས་མེད་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་བསྡུས་པ།

आचार्यअसङ्गविरचित महायान संग्रह

45. སློབ་དཔོན་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་མདོ་ཀུན་ལས་བཏུས་པ།

आचार्यनागार्जुनविरचितः सूत्रसमुच्चयः

46. ཆོས་ཀྱི་ཚིགས་སུ་བཅད་པ།

धम्मपद

47. चर्यासंग्रहः

48. མགོན་པོ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་རྣལ་འབྱོར་ཆེན་པོའི་རྒྱུད་དཔལ་གསང་བ་འདུས་པའི་བསྐྱེད་པའི་རིམ་པ་བསྒོམ་པའི་ཐབས་མདོ་དང་བསྲེས་པ།

आचार्यनागार्जुनविरचितम् गुह्यसमाजसाधनसूत्रमेलापकम्

49. རྗེ་ཙོང་ཁ་པ་ཆེན་པོས་མཛད་པའི་རྟེན་འབྲེལ་བསྟོད་པ་ལེགས་བཤད་སྙིང་པོ།

आचार्यचोंखापाविरचितम् प्रतीत्यसमुपादस्तुतिसुभाषितहृदयम्

50. གར་ཞ་བ་དངོས་གྲུབ་ཀྱིས་མཛད་པའི་ཉེ་སྦྱོར་ཉི་ཤུ་པ།

विंशति (संभोट उपसर्ग प्रक्रिया)

51. སློབ་དཔོན་མ་འགགས་པས་མཛད་པའི་ཆོས་མངོན་བསྡུས་པ། ཆོས་མངོན་བསྡུས་པ་བསྡུས་ཏེ་བཤད་པའི་འགྲེལ་པ་ཆོས་མངོན་ཀུནྡ་འཇུམ་པའི་ཟླ་ཟེར།

आचार्य अनुरुद्ध प्रणीतः अभिधम्मत्थसंगहो (प्रथम भाग)

52. སློབ་དཔོན་མ་འགགས་པས་མཛད་པའི་ཆོས་མངོན་བསྡུས་པ།ཆོས་མངོན་བསྡུས་པ་བསྡུས་ཏེ་བཤད་པའི་འགྲེལ་པ་ཆོས་མངོན་ཀུནྡ་འཛུམ་པའི་ཟླ་ཟེར།

आचार्य अनुरुद्ध प्रणीतः अभिधम्मत्थसंगहो (द्वितीय भाग)

53. བསྟན་བཅོས་ཆེན་པོ་མངོན་རྟོགས་རྒྱན་གྱི་ལུས་རྣམ་གཞག་གི་འགྲེལ་པ་འཇིགས་མེད་ཆོས་ཀྱི་དབང་པོའི་ཞལ་ལུང་།

अभिसमयालङ्कारमहाशास्त्रकायव्यवस्थाटीका अभयधर्मेन्द्र–मुखागम–नामः

54. རྗེ་གུང་ཐང་གིས་མཛད་པའི་ལེགས་པར་བཤད་པ་ཆུའི་བསྟན་བཅོས་ལུགས་གཉིས་རླབས་འཕྲེང་བརྒྱ་ལྡན།

सुंदर कहावतों की सौ लहर

55. ཀུན་མཁྱེན་པདྨ་དཀར་པོས་མཛད་པའི་སྔོན་འགྲོའི་ཟིན་བྲིས།

पद्मकरपो–विरचिता पूर्वयोग–टिप्पणी

56. རྗེ་ཙོང་ཁ་པ་བློ་བཟང་གྲགས་པའི་རྣམ་ཐར།

महात्मा चोङ्खापा (सुमतिकीर्ति) जी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

57. རྗེ་ཙོང་ཁ་པས་མཛད་པའི་ལམ་རིམ་བསྡུས་དོན།

बोधिपथपिण्डार्थ

58. རྗེ་བཙུན་རེད་མདའ་བས་མཛད་པའི་བཤེས་པའི་སྤྲིངས་ཡིག་གི་འགྲེལ་པ་དོན་སལ།

आचार्यनागार्जुन प्रणीत सुहृल्लेख एवं भट्टारक रेनदावा कृत सुहृल्लेख स्फुटार्थाटीका

59. དཔལ་སྤྲུལ་ཨོ་རྒྱན་འཇིགས་མེད་ཆོས་ཀྱི་དབང་པོས་མཛད་པའི་ཐེག་ཆེན་ལྟ་ཁྲིད་བདེན་གཉིས་རབ་ཏུ་གསལ་བ།

श्रीनिर्माण ओडियानअभयधर्मेन्द्रप्रणीतो महायानदर्शनपाठः सत्यद्वयप्रकाशो नाम

60. ཤར་ཙོང་ཁ་པ་བློ་བཟང་གྲགས་པས་མཛད་པའི་དྲང་བ་དང་ངེས་པའི་དོན་རྣམ་པར་འབྱེད་པའི་ལེགས་བཤད་སྙིང་པོ།

आचार्य सुमतिकीर्ति चोङ्खापा प्रणीत नेयार्थ–नीतार्थविभङ्गशास्त्र सुभाषित सार

61. ཆོས་རྗེ་སྒམ་པོ་པ་བསོད་ནམས་རིན་ཆེན་གྱིས་མཛད་པའི་དམ་ཆོས་ཡིད་བཞིན་གྱི་ནོར་བུ་ཐར་པ་རིན་པོ་ཆེའི་རྒྱན།

आचार्य गम्पोपा विरचित सद्धर्मचिन्तामणिमोक्षरत्नालङ्कार

62. རྣལ་འབྱོར་གྱི་དབང་ཕྱུག་དམ་པ་རྗེ་བཙུན་མི་ལ་རས་པའི་རྣམ་པར་ཐར་པ་ཐར་པ་དང་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའི་ལམ་སྟོན། གཙང་སྨྱོན་ཧེ་རུ་ཀ།

मोक्ष–सर्वज्ञ मार्ग–प्रदर्शक सद्–योगीश्वर भट्टारक मि–ला–रस्–पा का जीवन वृत्तान्त (चङ् ञोन् हे–रु–क)

63. རྗེ་རིན་པོ་ཆེས་མཛད་པའི་བླ་ན་མེད་པ་རིན་པོ་ཆེ་གསུམ་གྱི་གཏམ་གྱི་སྦྱོར་བ།

अनुत्तरत्रिरत्नकथायोगः (चोंखापासुमतिकीर्तिप्रणीतः)

64. ཀུན་བཟང་བླ་མའི་ཞལ་ལུང་།

गुरुसमन्तभद्रमुखागम् कुनसङ्लामाईशयललुङ्

65. གུང་ཐང་བསྟན་པའི་སྒྲོན་མེ་མཛད་པའི་ཆུ་ཤིང་གི་བསྟན་བཅོས།

भट्टारक गुङ्थङ् तेनपइ– ड्रोनमे विरचित जल एवं वृक्ष सुभाषितशास्त्रः

66. ལེགས་བཤད་བློ་གསར་མིག་འབྱེད།

बौद्ध सिद्धान्तसारः (बालमतिनयनोन्मीलक सुभाषित)

67. རྗེ་ཙོང་ཁ་པ་བློ་བཟང་གྲགས་པས་མཛད་པའི་ལམ་རིམ་ཆེན་པོ་ལས་ལྷག་མཐོང་ཆེན་པོ།

आचार्य चोङ्खापा–विरचित महाविपश्यना (बृहद् बोधिपथक्रम का अंतिम भाग)

68. करुणा स्फुटाभता अन्तर्दृष्टि (परमपावन दलाई लामा जी के प्रवचनों का संकलन)

69. ནང་ཆོས་ངོ་སྤྲོད།

बौद्धधर्म का परिचय

70. करुणा तथा व्यक्ति

71. विश्व समाज तथा सार्वभौम उत्तरदायित्व की भावना

72. बोधिचर्यावतारः

སྤྱོད་འཇུག

73. आनन्द की ओर

74. ཐོན་མི་ཀུན་ཏུ་བཟང་པོའི་རྣམ་ཐར།

75. आचार्य थोन्मी संभोट का जीवन–चरित्र

76. མདོ་སྡེ་པའི་ལྟ་བ།

सौत्रान्तिक दर्शन

77. ནུབ་ཕྱོགས་པའི་སེམས་གཙོའི་གྲུབ་མཐའ་དང་དེར་རྒོལ་བ་རྣམས་ཀྱི་ལུགས།

पश्चिमी आदर्शवाद और उसके आलोचक

7- frCcrh lkok fjXik vkSj Hkkjrh; vk;qosZn

d½ mís';

सोवा–रिग्पा, उपचार की तिब्बती कला न केवल तिब्बती संस्कृति के पांच बड़े अकादमिक विषयों में से एक है, बल्कि दुनिया की सबसे प्राचीन परंपराओं में से एक है, जो कि मानवता की भौतिक और मानसिक दशाओं के उपचार के लिए एक व्यापक रवैया प्रदान करता है।

[k½ lf{kIr bfrgkl

छोस 'युंग खा पेई न्गा तोन' के अनुसार, आदिम युग में तिब्बती जनता को एक पिछड़े हालात की वजह से कई तरह की कठिनाइयों से गुजरना पड़ा। वे काफी ठंड में रहते थे और जीवन गुजारने के लिए हालात बहुत सख्त थे। ऐसी हालत में दातों और मसूड़ों की कई समस्याएं हो जाती थीं और वे अक्सर अपच से परेशान रहते थे। खेती के विकास, अनुभव और प्राकृतिक वनस्पतियों और जीवों के अवलोकन की वजह से तिब्बतियों ने कई तरह के उपचार खोज लिए जैसे रक्तस्राव को रोकने के लिए पिघला मक्खन लगाना, गर्मी की विकार से ठंडा पानी पीना और छपछपाना, अपच से बचने के लिए उबला पानी पीना और धूप सेंकना, घाव को सूजन आदि से बचाने के लिए बांगमा का अवशेष लगाना, आदि प्रचलन आम था। इस तरह के व्यावहारिक अनुभव धीरे–धीरे तिब्बती चिकित्सा प्रणाली के विकास का आधार बने।

बॉन तोन्पा शेराब (400 से 500 ईसापूर्व) के सबसे बड़े बेटे चेबू त्रिशाय ने अपने पिता के मार्गदर्शन में चिकित्सा की कई पुस्तकें लिखी हैं। इसी प्रकार, 126 बीसी में तिब्बत के पहले नरेश न्यात्री त्सेनपो की ताजपोशी के बाद 27वें तिब्बत के नरेश तक, 41 रियासतों का विलय कर एक नए शासक के तहत लाया गया, तो तिब्बती सभ्यता का और विस्तार हुआ और उस समय के तत्कालीन बॉन सभ्यता के चिकित्सा के ज्ञान, कला, साहित्य को आगे का रास्ता मिला।

x½ Hkkjr ls igyk lEidZ

28वें नरेश ल्हा थो थो री के शासन के दौरान तिब्बत में भारत से पहले चिकित्साक आए। वे असल में दो भाई थे–बिजी गजेड और बिल्हा

ल्हाजे। दोनों ने काफी गहनता से यात्रा की और विभिन्न स्थानों पर अपनी उपचार कला का प्रदर्शन किया। अपने समर्पण की वजह से वे इतने प्रसिद्ध हो गए कि राजा ने उन्हें अपने शाही महल युम्बू ल्हखांग में आमंत्रित किया। राजा ने उनका सम्मान किया और अपना आशीर्वाद उन्हें दिया और तिब्बती सोवा रिग्पा में भारतीय उपचार कला को समाहित करने के लिए उन्होंने अपनी राजकुमारी यिद क्यी रोल्छा की शादी बिजी गजेड से कर दी। राजकुमारी ने जल्दी ही एक लड़के को जन्म दिया जिसका नाम धुंग गी थोरछोक रखा गया। इस लड़के ने अपने प्रख्यात पिता के मार्गदर्शन में उपचार कला का प्रभावी तरीके से अध्ययन किया और जल्दी ही वह तिब्बत के पहले चिकित्सक बन गए। बाद के वर्षों में वह राजा यानी अपने नाना के व्यक्तिगत चिकित्सक बने।

?k½ frCcr esa igyk varjjk"Vªh; lsfeukj

तिब्बत के 33वें नरेश सॉन्गत्सेन गाम्पो को तिब्बती जनता के सबसे महत्वपूर्ण शासकों में से एक माना जाता है। इसकी वजह तिब्बत के लिए उनके कई बेहतरीन योगदान को माना जाता है, जैसे समूचे तिब्बत भूमि का एकीकरण, तिब्बत की पहली लिपि का आविष्कार और तिब्बत में बौद्ध धर्म का प्रसार। उन्होंने पड़ोसी देशों के साथ रिश्ते भी बनाए और तिब्बतियों के बीच आचार संहिता का विकास किया। खासकर उस समय की तीन प्रख्यात और परंपरागत चिकित्सा पद्धतियां थीं, भारतीय आयुर्वेद, चीनी चिकित्सा और फारसी परंपरागत चिकित्सा।

तिब्बती चिकित्सा या सोवा रिग्पा के क्षेत्र के एकीकरण के लिए उन्होंने भारद्वाज, हेन वान हांग और गलेनो को उनकी समृद्ध चिकित्सा परंपरा के बारे में संवाद और चर्चा के लिए आमंत्रित किया। इस सेमिनार का नतीजा यह रहा कि एक शास्त्रीय प्रबंध लेख मिजिगपाई त्सोनछा को तैयार किया गया, जिसे कि उस समय के उपचार के लिए मौजूद महत्वपूर्ण और सामयिक जानकारी का विश्लेषक एकीकरण माना गया।

M½ lkok fjXik vkSj vk;qosZn ds chp fj'rs dk yxkrkj fodkl

अपने पूर्ववर्ती राजाओं की तरह ही 38वें नरेश त्रिसोन देत्सेन ने भी अपने पूरी जीवन तिब्बती संस्कृति के मानकों के विकास और उन्नयन में लगाया –खासकर बौद्ध धर्म और सोवा रिग्पा को बढ़ावा देने में– और

काफी हद तक इसमें सफल रहे, उन्होंने पड़ोसी देशों के कई विद्वानों को तिब्बत में आने का अनुरोध किया। खासकर भारत के प्रख्यात विद्वान जैसे धर्मराजा और शांति गर्भ तिब्बत में रहे और उन्होंने अपने चिकित्सा ज्ञान और परंपरा के आधार पर कई ग्रंथ लिखे जिनका बाद में तिब्बती भाषा में अनुवाद भी किया गया। साल 728 में उनके संरक्षण में ही कई विद्वानों को, खासकर भारत और तिब्बत के अन्य पड़ोसी देशों के, तिब्बत में तिब्बती चिकित्सा पर आयोजित पहले अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन 'सामये महाविहार' में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया गया।

सभी चिकित्सकों के ताज और तिब्बती चिकित्सा के जनक युथोक निंगमा योनतेन गोनपो (708–833) नरेश त्रिसोन्ग देत्सेन के शासन काल के दौरान रहते थे। युथोक ने तीन बार भारत की यात्रा की थी और सोवा रिग्पा के विकास में उनका महती योगदान था, उन्होंने तिब्बती जनता की खूब सेवा की। उन्होंने पड़ोसी देशों जैसे भारत, चीन, नेपाल और पश्चिम एशियाई देशों में प्रचलित उपचार की विभिन्न कलाओं के सार को समाहित और विश्लेषित किया और रगयुद शी के नाम से प्रचलित सोवा रिग्पा के प्रख्यात बुनियादी शास्त्रीय ग्रंथ–द मेडिकल तंत्र का संकलन किया। सामये में तिब्बती चिकित्सा पर आयोजित अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में सोवा रिग्पा का प्रतिनिधित्व करते हुए युथोक ने राजा के निजी चिकित्सक द्रांगती ग्याल न्ये खरपुक के साथ भाग लिया।

p½ vk;|o|fnd x|Fk v"Vk|x ân; dk frCcrh e| vu|okn

दसवीं सदी में राजा ओसुंग और उनके राजकुमार ने संयुक्त रूप से भारतीय विद्वान धर्म श्री वर्मा को पश्चिमी तिब्बत के न्गरी इलाके में आमंत्रित किया। यिग गी रिनछेन, मार्लो रिगपेए शुन नु, युग के आदरणीय शाक्य लोदोए जैसे दूसरे तिब्बती विद्वानों ने सामूहिक रूप से मिलकर प्राचीन भारत के प्रख्यात और शास्त्रीय ग्रंथों का अनुवाद किया। राजा को इस बात के लिए भी राजी किया कि वे 27 युवा, उत्साही और बुद्धिमान तिब्बतियों को अध्ययन के लिए भारत भेजें, ताकि वे तिब्बत में बौद्ध धर्म को नए सिरे से उभार सकें, लेकिन कुछ मामूली परंपराओं की वजह से इनमें से सिर्फ दो सदस्य ही अपना अध्ययन पूरा कर पाए। अपना अध्ययन पूरा करने के बाद दोनों तिब्बत लौट आए और प्रख्यात विद्वान बन गए, जिन्हें दो महान अनुवादक रिनछेन झांगपो और लेकपेए शेराब

के नाम से जाना जाता है। प्रख्यात विद्वान रिनछेन जांगपो ने भारत के जम्मू–कश्मीर राज्य के लद्दाख क्षेत्र और हिमाचल प्रदेश के लाहौल स्पीति इलाके की गहनता से यात्रा की। आज भी उक्त इलाकों में मठों और मंदिरों के निर्माण में उनके महत्वपूर्ण योगदान को याद किया जाता है।

प्रख्यात रिनछेन जांगपो ने अनुवाद की कई परियोजनाओं की अध्यक्षता की और लोपोन पाओ द्वारा लिखित अष्टांगहृदय और मुस्लिम विद्वान दावा न्गोन्गा द्वारा तिब्बती भाषा में लिखित इसकी टिप्पणी दासेर के अनुवाद में सक्रिय योगदान दिया।

N½ ;Fkksd ;kSursu xksEiks tfu;j us Ng ckj Hkkjr dh ;k=k dh

युथोक योनतेन गोन्पो जूनियर (1126–1201) को सोवा रिग्पा के इतिहास में चिकित्सा बुद्ध का दूसरा अवतार माना जाता है। 18 वर्ष की उम्र होने के बाद उन्होंने छह बार भारत की यात्रा की और भारत के विद्वानों से विभिन्न परंपरागत उपचार तकनीक के बारे में ज्ञान हासिल किया। उन्होंने नेपाल, श्रीलंका और पेगू (म्यांमार) की यात्रा की। उन्होंने अपने पिता युथोक योनतेन गोम्पो के संकलन ग्युदशी, जिसे कि अष्टांगहृदय का सार माना जाता है और इसकी टिप्पणियों को दूसरी बार संपादित किया और उन्हें विकसित व्यावहारिक जानकारियों और इसमें करीब 13 पीढ़ियों से ज्यादा के दौर की पूरक रचनाओं से अद्यतन किया। इस तरह उन्होंने ग्युदशी के मौजूदा संस्करण के रूप में सर्वश्रेष्ठ शास्त्रीय ग्रंथ तैयार किया– 'अमृत सार तंत्र की आठ शाखाओं पर गुप्त निर्विवाद निर्देश।' ग्युदशी को दुनिया भर के चिकित्सा साहित्य में सबसे ज्यादा सम्मान हासिल है। सोवा रिग्पा के अध्ययन के लिए यह बुनियादी ग्रंथ माना जाता है। 12वीं सदी के दौरान भारत में विदेशी आक्रमण की वजह से बुद्ध धर्म का जब पतन होने लगा, तो दोनों देशों के द्वारा बौद्ध संस्कृति, अकादमी और तिब्बती चिकित्सा के क्षेत्र में बने रिश्तों को भी झटका लगा और दोनों देशों के बीच ज्ञान के आदान–प्रदान का दौर खत्म हो गया।

t½ Hkkjr ds fgeky;h {ks=ksa esa lksok fjXik

उत्तरी भारत के लद्दाख, ज़ांसकर, खुनू, लाहौल–स्पीति, किन्नौर, सिक्किम से लेकर अरुणाचल प्रदेश के तवांग तक फैले हिमालय पार इलाके में रहने वाले लोग उसी तरह से बुद्ध धर्म, बौद्ध संस्कृति और रीति–रिवाजों

का पालन करते थे और उसका लाभ उठाते थे, जिस तरह से बर्फ की भूमि तिब्बत के लोग। इसी प्रकार, पिछली कई शताब्दियों से इन इलाकों में तिब्बती औषधियों का व्यापक तौर पर इस्तेमाल किया जाता रहा है। उदाहरण के लिए: सोवा रिग्पा की पैतृक रूप से प्रैक्टिस करने वाले, सोवा रिग्पा की औषधि और शिक्षा में व्यापक रुचि रखने वाले और सोवा रिग्पा के चिकित्सकों से जुड़ी परंपरागत सरनेम 'एमजी' को आज भी इन इलाकों में आमतौर पर देखा जा सकता है। इसके अलावा, 1959 में चीन जनवादी गणराज्य द्वारा तिब्बत पर कब्जे से पहले गानदेन, ड्रेपुंग और सेरा जैसे बौद्ध विश्वविद्यालयों में अध्ययन के लिए जाने वाले हिमालयी क्षेत्र के विद्यार्थियों का प्रवाह लगातार बना रहता था। ये विद्यार्थी तिब्बत के चिकित्सा स्कूलों में प्रवेश चाहते थे और अपना अध्ययन पूरा कर भारत लौट आते थे। ऐसे कई दृष्टांत मिलते हैं, जब ऐसे स्नातक विद्यार्थियों ने महान सफलता हासिल की और अपने इलाके की जनता को प्रभावी स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया कीं।

इसी प्रकार, इतिहास में यह उल्लेख मिलता है कि दक्षिणी तिब्बत के एक तिब्बती नरेश क्यिदे निमागोन ने अपना निजी भारतीय चिकित्सक रखा था जो ज़ांस्कार में रहते थे। उन्होंने अपने जन्म स्थान में तिब्बती चिकित्सा की समृद्धि के लिए अथक रूप से प्रयास किया। फिलहाल सोवा रिग्पा के ज्यादातर चिकित्सक इसकी शीर्ष संस्था 'चिकित्सों की परिषद' के सदस्य हैं।

>½ fuokZlu esa esu&Rlh&[kkax dh iquLFkkiuk

सन 1959 में चीन जनवादी गणराज्य द्वारा तिब्बत पर हमले और कब्जे के बाद 14वें दलाई लामा और हजारों तिब्बतियों ने भारत में शरण लिया। इसके बाद 14वें दलाई लामा ने भारत में विभिन्न तिब्बती सांस्कृतिक केंद्रों की पुनर्स्थापना की। और सन 1961 में मेन–त्सी–खांग, जिसका तिब्बती चिकित्सा एवं खगोल विज्ञान से समर्पित है उसका पुनर्जन्म हुआ–इसका सर्वप्रथम 1916 में परमपावन 13वें दलाई लामा द्वारा ल्हासा में स्थापित किया और 1961 में की धर्मशाला शहर, भारत में पुनर्स्थापना की गई। यह तिब्बती चिकित्सा और खगोल विज्ञान को समर्पित एक केंद्र है।

तिब्बती चिकित्सा और खगोल विज्ञान संस्थान मेन–त्सी–खांग का पंजीकरण सोसाइटी रजिस्ट्रेशन एक्ट 21 के तहत एक शैक्षणिक, सांस्कृतिक और चैरिटेबल संस्थान के रूप में हुआ है। परमपावन 14वें दलाई लामा के कृपालु मार्गदर्शन में इस संस्थान की स्थापना के 55 साल हो गए हैं और इस अवधि के दौरान संस्थान ने एक गैर सरकारी संस्थान के रूप में अपने को खड़ा किया है। मेन–त्सी–खांग ने भारत के 17 राज्यों के शहरों, कस्बों और ग्रामीण इलाकों में 55 शाखाएं खोली हैं। ये केंद्र भौतिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए समर्पित हैं, जहां हर साल दस हजार से ज्यादा मरीजों का प्रभावी तरीके से उपचार होता है। सोवा–रिग्पा को बहुत से भारतीयों की तरफ से तारीफ, सम्मान, सहयोग और समर्थन मिलता है। खासकर साल 2010 में भारत सरकार ने कानूनी तौर पर इसको मान्यता दी और सोवा रिग्पा को भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय के आयुश के तहत शामिल परंपरागत चिकित्सा प्रणालियों में से एक माना गया।

सोवा रिग्पा और खगोल विज्ञान के लिए समर्पित मेन–त्सी–खांग द्वारा गरीबी रेखा से नीचे जीने वाले भारतीयों, गंभीर रोगों से पीड़ित मरीजों और विकलांग लोगों को मुफ्त उपचार या रियायत दी जाती है। ग्रामीण इलाकों में समय–समय पर चिकित्सा पहुंचाने के लिए दौरे आयोजित किए जाते हैं और स्वास्थ्य तथा रोगों से बचाव पर परिचर्चाओं का आयोजन किया जाता है। डायबिटीज मेलिटीज, चर्म रोग, कैंसर जैसी भारतीयों में पाई जाने वाली आम बीमारियों से मुकाबले के लिए मेन–त्सी–खांग ने दवाओं, हर्बल टी, क्रीम आदि के रूप में नए स्वास्थ्य उत्पाद लॉन्च किए हैं। मेन–त्सी–खांग कॉलेज में प्रवेश के लिए आयोजित होने वाली परीक्षा में दो सीट भारत के हिमालयी क्षेत्रों के लिए खास तौर से आरक्षित रखे गए हैं।

मेन त्सी खांग नई दिल्ली स्थित प्रख्यात संस्थान एम्स (AIIMS) के साथ मिलकर सहयोगात्मक अनुसंधान को महत्व देता है। इसके द्वारा राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों और सेमिनार का आयोजन किया जाता है, जिसमें तमाम तरह के परंपरागत चिकित्सा प्रणाली से विद्वानों को आमंत्रित किया जाता है। मेन–त्सी–खांग राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय चिकित्सा यात्रा, सेमिनार, सम्मेलन, प्रदर्शनी, आयोजन और समारोहों में हिस्सा लेता है।

8- T;kfr"k Hkh Hkkjr vkj frCcr dk tkMrk g

आमतौर पर, पिछले वर्षों में विकसित सभी ज्योतिषीय प्रणालियां प्राकृतिक पर्यावरण के अन्वेषण से मिले अनुभवों का नतीजा हैं। तिब्बती खगोल विज्ञान के विकास का ही उदाहरण लें, यह आकाश और उसके आधार पृथ्वी के बीच परस्पर निर्भरता के मानवीय अन्वेषण से मिले अनुभवों पर आधारित है। और यह भारत एवं चीन जैसे देशों की ज्योतिषीय और खगोलीय परंपराओं के सार के साथ और भव्यता हासिल कर चुका है।

तिब्बती खगोल विज्ञान को तीन हिस्सों में बांटा जाता है–प्राचीन खगोल विज्ञान प्रणाली, श्याम या मौलिक ज्योतिष और श्वेत खगोल विज्ञान या एस्ट्रोनॉमी। इन तीनों में से यहां चर्चा के लिए मुख्य विषय जो प्रासंगिक है, वह श्वेत खगोल विज्ञान या एस्ट्रोनॉमी है, जो भारत से आया था। 'श्वेत खगोल विज्ञान' भी यह संकेत देता है कि इसका उद्गम भारत से है। इसको इसके अलावा आगे कालचक्र खगोल विज्ञान और यांगचार (स्वर की उत्पत्ति) जैसे उप समूहों में विभाजित किया गया। कालचक्र खगोल विज्ञान का उद्गम कालचक्र तंत्र से हुआ।

सबसे आम मान्यता यह है कि परिनिर्वाण से कुछ समय पहले दक्षिण भारत के अमरावती में स्थित श्री धान्याकटका स्तूप में बुद्ध ने सम्भल के पहले धर्म राजा दावा सांगपो (भगवान वज्रपानी का प्रकटीकरण) और 96 अन्य नरेशों को उपदेश दिया था, अपने को श्रीकालचक्र देव के प्रकटीकरण के द्वारा। इसके अगले साल श्मबाला में लौटने पर उन्होंने राजा के बेटे ल्हवांग (सुरेश्वरा) को यह उपदेश दिया जो कि श्मबाला के दूसरे धर्मराजा बने। इसके बाद यह उपदेश लगातार आने वाले सम्भल के सभी धर्म राजाओं को दिया गया और अंत में श्मबाला के कल्कि नरेश रिगदेन जामफेल धाकपा तक पहुंचा।

साल 177 ईस्वी के तीसरे चंद्र महीने (काष्ठ–चूहा) रिग्देन जामफेल धाकपा ने अपना उपदेश और प्रवर्तन दिया जैसा कि भविष्यवाणी में कहा गया था। वे विभिन्न नस्लों को एक नस्ल के तहत लाए और उन्हें कल्कि (रिग्देन) नाम दिया। उन्होंने सबसे गहन कालचक्र लघु तंत्र तैयार किया जिसमें कुल 1030 छंद थे। साल 1027 में 12वें नरेश रिग्देन निमा के राज्याभिषेक का दिन था, और खासकर उसी साल लोत्सावा गिजो दवाए

वूजर ने कालचक्र तंत्र का पहली बार तिब्बती में अनुवाद किया। इस वर्ष 60 साल का राबजुंग चक्र शुरू हुआ। कालचक्र खगोल विज्ञान न सिर्फ तिब्बती खगोल विज्ञान का हिस्सा है, बल्कि समूचे खगोल विज्ञान का सबसे भरोसेमंद बुनियाद है।

काचलक्र तंत्र आंतरिक विज्ञान का अनिवार्य हिस्सा है जो कि बौद्ध धर्म के पांच अध्यायों में है, जैसा कि बुद्ध ने उपदेश दिया था। पहला अध्याय बाहरी दुनिया अध्याय है, जिसमें मुख्यतः ग्रहों की चक्रीय गति, चंद्र महल आदि की चर्चा होती है। इसमें न केवल इस बात को रेखांकित किया गया है कि किस तरह से समूचा चेतन और अचेतन ब्रह्मांड चार तत्वों से बना है, बल्कि इसमें इस बात की भी चर्चा होती है कि सूर्य, चंद्र और ग्रहों की गति किस तरह से होती है। खासकर गणना प्रणाली को रेत गणना कहा जाता था और उसमें उनकी गति के रचनात्मक एवं विनाशक प्रभाव का अध्ययन किया जाता था।

कालचक्र खगोल विज्ञान रीढ़ की तरह खड़ा रहा और उसने पहले से प्रचलित प्राचीन तिब्बती खगोल विज्ञान को परिपूर्णता दी। इस प्रकार तिब्बती खगोल विज्ञान अपने आप में एक स्वयं में उपयुक्त तंत्र बन गया। तिब्बती ज्योतिष काफी हद तक भारतीय ज्योतिष जैसा ही था, जिसमें संख्याएं थी, संख्या प्रणाली थी, वर्षों, महीनों और ग्रहों के लिए शब्दावली थी। इसमें ग्रहों की गणना के लिए दो तरह की प्रणाली थी। पहले में पांच घटक थे, जिनमें दिन, तिथि, चंद्र महल, योग और कारण शामिल थे। इसके बाद पांच ग्रहों की सौर, चंद्र और राशिचक्रीय गणना थीः चंद्र, पारा, बृहस्पति, शुक्र और शनि। इसमें राहु, केतु सौर और चंद्र ग्रहण, धूमकेतु, जन्म संबंधी चार्ट, ब्रह्मांड, तीन दिवसीय गणना और अन्य चीजें तिब्बती खगोल विज्ञान की छतरी के नीचे पाई जाती थीं। इनको तिब्बती खगोल विज्ञान के शुरुआती गुरुओं के निर्देश, तर्क–वितर्क और अनुभवों पर आधारित लगातार प्रयोगों के बाद वैधता हासिल हुई थी। यंगचार (उभरते स्वर) एक ऐसी प्रणाली है जो कि प्राथमिक रूप से लोगों की पीड़ा और समस्याओं को समझने के लिए खगोल विज्ञान पर आधारित है।

यह दो प्रकार की होती हैः पहले का उल्लेख कालचक्र तंत्र के परिप्रेक्ष्य में किया जाता है, और दूसरा गैर बौद्ध प्रणाली के अनुरूप है। पहला जहां कालचक्र खगोल विज्ञान की एक विशेषता है, इसलिए उसका उद्गम भी

उसी तरह का है, जैसा कि कालचक्र खगोल विज्ञान का है। यह खगोल विज्ञान का एक ऐसा स्वरूप है, जिसका अभ्यास वास्तविकता और सभी तरह की गतिविधियों के नतीजों को समझने के लिए किया गया था। कहा जाता है कि इसका उपदेश भगवान शिव और पार्वती ने दिया था। इसे यांगचार (उभरते स्वर) इसलिए कहा जाता है, क्योंकि इसमें संस्कृत के 16 स्वर होते हैं, जो कि सभी अक्षरों के सार हैं। इस तरह यह चार तत्वों में घनीभूत है और तिथियों में दर्शाया गया है। ग्रहों और चंद्र महल को आधार मानने वाले पहले के विचारों में प्राणि मात्र के संबंध में सभी तरह की गतिविधियों की अनुकूलता को देखा गया। इसमें सभी तरह के पहिए थे जैसे रूसबेन खोरलो (कच्छप पहिया), सेंगदेन खोरलो (शेर–मैट पहिया), धुग खोरलो (छाता पहिया) आदि। इनका उल्लेख सालाना पंचांग में किया गया था, इनमें ग्रहों के चक्रीय गति को समझा जाता था और इसके बाद बारिश, गर्मी आदि भौतिक दशाओं की भविष्यवाणी की जाती थी। इसमें राजाओं, देशों के कल्याण और उनके प्रकार की भी भविष्यवाणी की जाती थी। बौद्ध विचारों के अनुसार भगवान शिव और पार्वती भगवान अवलोकितेश्वर और तारा के अवतार थे। इसके मुताबिक, यह तंत्र पहले ईश्वर की दुनिया में फला–फूला और इसके बाद धरती पर मनुष्यों के बीच फैला, जब हमारी जीवन प्रत्याशा 120 साल हुआ करती थी। यह 12वीं सदी में तिब्बत पहुंचा, जब इसका अनुवाद लोवो लोत्सावा शेराब रिनछेन ने किया। तंत्र के इस 10 अध्याय का तब सालों तक महान गुरुओं द्वारा गहन अभ्यास किया गया, पूरे अनुभव और ज्ञान के साथ। इन गुरुओं ने न्गोत्सर ग्येन की मेतोक, मांग–कुरा, कुनजिंग, यांगचार छेनमो आदि नाम से टिप्पणियां भी तैयार कीं जो आज भी अध्ययन के लिए आसानी से उपलब्ध हैं।

जमीनी स्तर पर व्यावहारिकता की बात की जाए, तो यह आज भारतीय लोगों द्वारा साधना किए जा रहे तंत्र से काफी मिलता–जुलता है। उदाहरण के लिए जन्म कुंडली के निर्माण में इन दोनों में काफी समानताएं हैं, जैसे 12 घरों का स्थान, 12 घरों को समझना, पहले घर को जन्म का घर मानना और आगे भी उसी तरह से, 12 राशियां, 12 राशियों के स्वामी और उनके दोस्त एवं दुश्मन। स्थिर, अस्थिर, दोहरा स्वभाव आदि के तहत राशियों की पहचान भी समान तरीके से होती है। इसके बाद पूरे जीवन अवधि को नौ ग्रहों में विभाजित किया गया है, जिसे महादशा कहा जाता है और

इसके बाद फिर इन्हें अंतर्दशा में विभाजित किया जाता है। जीवन अवधि को नौ ग्रहों में विभाजित करने का कार्य इस प्रकार होता है–सूर्य के लिए 6 साल, चंद्र के लिए 10 साल, राहु के लिए 18 साल, बृहस्पति के लिए 16 साल, शनि के लिए 19 साल, बुध के लिए 17 साल, केतु के लिए 7 साल और शुक्र के लिए 20 साल। इस तरह कुल योग 120 साल होता है, जो उस समय मनुष्यों का जीवन काल हुआ करता था।

जन्म काल तत्काल कहलाता था, जबकि ग्रहों के रूप में राहु और केतु की पहचान और लोगों के जीवन पर उनका प्रभाव, ग्रहों की ताकत, दिन और रात की ताकत, दिशाओं की ताकत आदि समान थे। पन्चांग का निर्माण, पांच घटक, पांच ग्रहों की गणना, 27 चंद्र महल आदि भी समान थे। इस प्रकार ऐतिहासिक पहलू और उनके आज के अभ्यास से देखें तो दोनों में न केवल महान संबंध हैं, बल्कि सभी पहलुओं में काफी समानता है।

– हरिवर्मा के स्वरोदयरथसंहिता और अयुरगणितफलप्रकाश का भी तिब्बती में अनुवाद मनपुरुष द्वारा किया गया।

9- Hkkjr vkSj frCcr ds chp x#&psyk lac/k

भारत और तिब्बत के बीच गुरु–चेला संबंध मुख्यतः धार्मिक प्रकृति का है और बौद्ध ही वह धर्म है, जिसने इस रिश्ते को बांध कर रखा है। तिब्बत में यह व्यापक तौर पर याद किया जाता है कि तिब्बत में बौद्ध धर्म की शुरुआत तिब्बत के 27वें नरेश ल्हा–थो–थो–री–नयंत्सेन के समय में हुई। लेकिन तिब्बत में बौद्ध धर्म की शुरुआत को सिर्फ भारतीय गुरु की बौद्ध धर्म के उपदेश देने में सफलता और तिब्बतियों के धर्मांतरण से ही नहीं मानी जा सकती। यह कहा जाता है कि उस समय नरेश ल्हा–थो थो री नयंत्सेन ने कई बौद्ध ग्रंथ और पूजा की वस्तुएं हासिल कीं और अगले दिन तिब्बतियों को यह लगा कि ये वस्तुएं भविष्य में बौद्ध धर्म के विकास की भविष्यवाणी कर रही हैं। इसलिए तिब्बत में बौद्ध धर्म की इस शुरुआत को प्रतीकवादी प्रकृति से ज्यादा नहीं माना जा सकता।

इसके पांच पीढ़ियों के बाद, तत्कालीन 32वें नरेश सॉन्गत्सेन गाम्पो (617–650 ईस्वी) के दूरदृष्टि वाले नजरिए और तिब्बत की अपनी लिखित भाषा होने पर जोर देने की वजह से थोन्मी अनु के बेटे थोन्मी सम्भोटा को राजा की दृष्टि को साकार करने के लिए भारत भेजा गया और उन्होंने करीब सात साल तक भारतीय भाषा और साहित्य, बौद्ध दर्शन तथा ज्ञान के कई अन्य क्षेत्रों का अध्ययन किया। उन्होंने भारतीय गुरुओं ब्राह्मण लिपिकरा और देव विद्यासिंह के मार्गदर्शन में यह अध्ययन किए। इससे भारत और तिब्बत के बीच गुरु–चेला संबंध के पहले रिश्तों का विकास हुआ।

तिब्बत लौटने के बाद उन्होंने तिब्बती लिपि और व्याकरण का आविष्कार किया, जो कि आज भी तिब्बतियों के द्वारा इस्तेमाल किया जाता है। जब उन्होंने नई खोजी गई तिब्बती लिखित भाषा में पहले बौद्ध ग्रंथ का अनुवाद शुरू किया, तो उन्हें इस काम में भारतीय गुरु कुसारा और ब्राह्मण शंकर और दो अन्य गुरुओं की सहायता मिली, जो कि उस समय बौद्ध धर्म का प्रवचन देने के लिए तिब्बत पहुंचे थे। उन्हें उन पहले भारतीय गुरुओं में शामिल किया जाता है, जिन्होंने तिब्बत में पहले भारत–तिब्बत संबंधों की स्थापना की।

18वीं सदी में तिब्बत के प्रख्यात अनुवादक त्सुलट्रीम रिनछेन द्वारा तैयार ग्रंथसूची तेनग्युर डकार–छाग के मुताबिक 7वीं सदी में पहले भारतीय गुरु की यात्रा के बाद 18वीं सदी तक करीब 95 भारतीय पंडित तिब्बतियों

के अनुरोध पर तिब्बत में मुख्यतः बौद्ध धर्म की शिक्षा देने के लिए आए और उन्होंने तिब्बतियों को भारतीय व्याकरण और साहित्य भी पढ़ाया और सैकड़ों तिब्बती शिष्य तैयार किए।

यह भी कहा गया कि उस सदी में तिब्बतियों ने करीब 215 प्रख्यात ग्रंथों का अनुवाद किया और उनमें से ज्यादातर लोग तिब्बत के पहले अनुवादक थोन्मी सम्भोटा द्वारा निर्धारित दृष्टांत के अनुरूप ही भारत गए और उन्होंने भारतीय गुरुओं के चरणों में बैठकर भारतीय भाषाएं तथा बौद्ध दर्शन सीखे और उनमें महारत हासिल की। 37वें नरेश त्रिसोन्ग देत्सेन के शासनकाल के दौरान भारतीय गुरु शांतरिक्षत और पद्मसंभव ने नरेश के आमंत्रण पर तिब्बत का दौरा किया और उन्होंने वहां समूचे तिब्बत में बुद्ध सूत्र तथा तंत्र का प्रचार किया। इसके अलावा इन दो गुरुओं के मार्गदर्शन में पहला बौद्ध शिक्षण केंद्र खोला गया, जिसे आज समये मठ के नाम से जाना जाता है। बौद्ध धर्म का प्रबल विकास और उसका अस्तित्व पूरी तरह से भिक्षुवादी समुदाय पर निर्भर था, इसलिए त्रिसोन्ग देत्सेन ने सात तिब्बतियों का चयन भिक्षु की दीक्षा लेने के लिए किया। नरेश को इस बात में संदेह था कि तिब्बती भिक्षुओं की दीक्षा के लिए निर्धारित कानून का पालन कर पाएंगे और ब्रह्मचर्य का जीवन जी पाएंगे, इसलिए परीक्षण के लिए उन्होंने सात कैंडिडेट का चुनाव किया। मठ अध्यक्ष के रूप में शांतरक्षित की अध्यक्षता में इस दीक्षा की शुरुआत भारत से श्रावस्ती पद्धति के 12 भिक्षुओं को आमंत्रित करने के साथ हुई। असल में भिक्षुओं की दीक्षा के लिए निर्धारित संहिता के मुताबिक 12 पूरी तरह से दीक्षित भिक्षुओं को दीक्षा के दौरान साक्षी के रूप में बुलाया जाता है। सभी तिब्बतियों ने सर्वसम्मति से इस आयोजन की सफलता का श्रेय शांतरक्षित को दिया, क्योंकि वह तिब्बत के पहले मठ अध्यक्ष माने जाते थे।

भारतीय गुरुओं की कृपा से तिब्बती लोग भारत के साथ गुरु–चेला संबंध के इस धार्मिक इतिहास को करीब एक हजार साल तक बनाए रखने में कामयाब रहे। भारत–तिब्बत संबंध को सिर्फ धार्मिक प्रकृति तक सीमित करना अन्याय होगा। यदि कोई व्यक्ति तिब्बती भाषा की विशेषताओं का मूल्यांकन करे, तो भारत और तिब्बत के बीच भाषाई रिश्ते को वह नजरअंदाज नहीं कर पाएगा। औषधि और ज्ञान के अन्य क्षेत्रों में तिब्बत अब भी भारत के प्रति कृतज्ञ है।

नरेश त्रिसोंग देत्सेन के शासन काल में मौजूदा तिब्बती चिकित्सा व्यवस्था में सुधार के अपने प्रयासों के तहत भारत, चीन, फारस और नेपाल के नौ प्रख्यात विद्वानों को आमंत्रित किया गया। राजा ने अपने व्यक्तिगत चिकित्सक युथोक योनतेन गोन्पो, जिन्हें तिब्बती चिकित्सा के देवता के रूप में मानते थे, को इस बात की इजाजत दी कि वह इन विद्वानों के साथ संवाद करें और चिकित्सा ज्ञान का आदान–प्रदान करें।

काल क्रमानुसार बात करें, तो हम इस बैठक की तुलना आज चिकित्सा पर होने वाले अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों से कर सकते हैं। इस सम्मेलन में पहली बार आयुर्वेदिक परंपरा से परिचय कराया गया। आयुर्वेदिक परंपरा को ज्यादा से ज्यादा समझने के लिए युथोक योनतेन गोन्पो ने तीन बार भारत की यात्रा करने का साहस किया। इन तीन यात्राओं के दौरान वह भारत में नौ साल और आठ महीने तक रहे और भारत तथा नेपाल के करीब 111 विभिन्न गुरुओं से भारतीय आयुर्वेद की परंपरा को सीखा। ऐसा माना जाता है कि युथोक योनतेन गोन्पो की इन यात्राओं ने चिकिसा के क्षेत्र में भारत और तिब्बत के बीच पहले गुरु–चेला संबंधों को मजबूत बनाया।

इसके बाद 13वीं सदी में तिब्बत के प्रख्यात अनुवादक शॉन्गतोन दोरजी ग्यालत्सेन ने दक्षिण भारत के प्रसिद्ध विद्वान अचार्य डांडी के कविता संग्रह काव्यदर्श का पहली बार तिब्बती भाषा में अनुवाद किया। वे भारतीय पंडित लक्ष्मा कारा को तिब्बत आने का आमंत्रण देने के लिए भारत गए जो उस समय काव्यदर्श पर महारत हासिल करने वाले एकमात्र विद्वान माने जाते थे। कई सहज और चतुर युक्तियों से (ऐसे समय में जब बिना प्रबल आकर्षण के किसी की भी हिम्मत दुर्गम हिमालय के पार की कठिन यात्रा करने की नहीं होती थी) शॉन्गतोन तिब्बत में लक्ष्मा कारा को आमंत्रित करने में सफल रहे। तिब्बत में शॉन्गतोन दोरजी ग्यालत्सेन ने लक्ष्मा के मार्गदर्शन में काव्यदर्श पर महारत हासिल की और उनके ही मार्गदर्शन में शॉन्गतोन ने काव्यदर्श का पहली बार तिब्बती भाषा में अनुवाद किया।

व्याकरण के क्षेत्र में थोन्मी सम्भोटा ने भारतीय व्याकरण व्यवस्था के मुताबिक पहले तिब्बती व्याकरण की रचना की। 17वीं सदी में जब भारतीय पंडित पाल भट्ट और उनके भाई पंडित गोकुल नाथ मिश्रा तिब्बत पहुंचे, तो 5वें दलाई लामा ने उन्हें इस मौके पर सैकड़ों स्वर्ण मुद्राएं शुल्क के रूप में दीं और उनसे अनुरोध किया कि वे तिब्बती अनुवादक नवांग फुंत्सोक को प्रसिद्ध भारतीय व्याकरणिक ग्रंथ पाणिनीविद्याकरण पढ़ाएं।

नवांग ने इस व्याकरणिक ग्रंथ को दो भारतीय पंडितों से गहनता से पढ़ा और बाद में इसका तिब्बती में अनुवाद भी किया। जैसा कि पहले ही बताया गया है, इसके पहले भारत और तिब्बत के बीच गुरु और चेला के रिश्ते की प्रकृति वाले बहुत कम रिश्ते थे। आमतौर पर कहें तो यह शुरुआती तिब्बती अनुवादकों के बीच एक तरह का रिवाज बन गया था कि किसी ग्रंथ के अनुवाद की कोशिश से पहले किसी भारतीय गुरु के मार्गदर्शन में किसी विषय पर महारत हासिल करें। प्राचीन तिब्बती विद्वान सोने और चांदी से ज्यादा भारतीय गुरुओं से ज्ञान हासिल करने की चाह रखते थे और यह बात उन्हें अपने प्राणों से भी ज्यादा प्रिय थी। ल्हा लामा येशे ओए की कहानी इस भावना का ही प्रतीक है।

उस समय के तिब्बत के सबसे महत्वपूर्ण अनुवादक ल्हा लामा येशे ओए का जन्म दूसरे प्रसार के दौर में हुआ था, जब तिब्बत में राजशाही के खात्मे से तिब्बत में बौद्ध धर्म के जबर्दस्त प्रसार का युग शुरू हुआ। वह पश्चिमी तिब्बत के नरेश भी थे (यहां यह बात समझनी होगी कि तिब्बत में राजशाही के खात्मे से तिब्बत कई छोटी–छोटी रियासतों में बंट गया और ल्हा लामा येशे ओए ऐसी ही एक रियासत के राजा थे)। बौद्ध धर्म अपनाने के बाद उन्होंने अपने छोटे भाई को राजपाट सौंप दिया और एक भिक्षु बन गए। बाद में उन्हें पड़ोसी देश की एक इस्लामी सेना ने गिरफ्तार कर लिया और यह धमकी दी कि उन्हें तभी रिहा किया जाएगा, जब या तो वे इस्लाम अपना लें या अपने शरीर के वजन के बराबर सोना तौलकर दें।

उनकी रिहाई के लिए उनके भतीजे जांगछुप ओए ने समूचे तिब्बत से सोना जुटाया और इतना सोना जुटाने में सफल रहे जो कि सिर को छोड़कर उनके बाकी के शरीर के वजन के बराबर था। जब उनके भतीजे ने उन्हें इसकी जानकारी दी तो उन्होंने कहा कि उन्हें इतना सोना बर्बाद करने की जरूरत नहीं है, वह बुर्जुर्ग हो चुके हैं और तिब्बत को उनके रहने न रहने का कोई फायदा नहीं है। उन्होंने अपने भतीजे को सलाह दी कि उनकी रिहाई के लिए सोना देने की जगह वह इस सोने का इस्तेमाल अतीशा और अन्य भारतीय विद्वानों को तिब्बत बुलाने के लिए करे। वह कैद में ही स्वर्गवासी हो गए और उनकी सलाह को मानते हुए साल 1040 में अतीशा को तिब्बत में आमंत्रित किया गया।

10- frCcr dk iBkj dk oSf'od egRo

नए—नए अध्ययनों के निष्कर्षों से तिब्बत के पठार की पारिस्थितिकीय भूमिका और वैश्विक महत्व ज्यादा से ज्यादा स्पष्ट होती जा रही है। साथ ही साथ यह वैज्ञानिकों द्वारा तिब्बत पठार को वर्णित करने के लिए इस्तेमाल होने वाले तमाम तरह के नाम से भी स्पष्ट है, जैसे—दुनिया की छत, तीसरा ध्रुव, एशिया का जल टावर और रेनमेकर।

तिब्बती पठार (टीपी) और भारतीय उपमहाद्वीप के बीच रिश्ता करीब 5.5 करोड़ साल पहले शुरू होता है, जब भारतीय उपमहाद्वीप यूरेशिया से टकराया था। टकराव की इस लंबी भूगर्भिक प्रक्रिया में तिब्बत के पठार का जन्म हुआ और विशाल हिमालय पर्वत पठार के दक्षिणी—पश्चिमी किनारे तक खिंच गया। तिब्बत पठार के निर्माण और धीरे—धीरे उसके ऊपर की ओर बढ़ने से दो स्थानों का परिदृश्य और जलवायु दशा बदल गईः तिब्बत पठार और भारतीय उपमहाद्वीप। हिमालय द्वारा तिब्बत में मानसून को आने से रोक देने की वजह से तिब्बत का पठार सूखा हो गया, जबकि भारतीय उपमहाद्वीप में पूरी तरह से मानसून का लाभ मिलने लगा। इसके बाद से ही तिब्बत का पठार भारतीय मानूसन और पूर्वी एशिया के मानसून पैटर्न में समय और तीव्रता के लिहाज से विभिन्न तरह की भूमिकाएं निभाने लगा।

तिब्बत के पठार की समुद्र से औसत ऊंचाई 4,000 मीटर से ज्यादा है और इसका क्षेत्रफल 25 लाख वर्ग किमी तक है, जो कि धरती के सतह का करीब 2 फीसदी हिस्सा है। इसलिए इसे दुनिया की छत कहते हैं। पठार 14 महान पर्वत श्रेणियों से बना है और इसमें जोमोलांगमा (माउंट एवरेस्ट) जैसी सैकड़ों धरती की सर्वोच्च चोटियां हैं। हिमालय की तलहटी में स्थित करीब सभी भारतीय राज्यों की सीमा भौगोलिक रूप से तिब्बत के साथ साझा है। यह सीमा भारत के उत्तर—पश्चिमी छोर जम्मू—कश्मीर राज्य से देश के पूर्वोत्तर हिस्से अरुणाचल प्रदेश तक फैली हुई है। इसके अलावा, तिब्बत की सीमा हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और सिक्किम जैसे राज्यों से भी मिलती है।

frCcrh iBkj esa ekStwn 14 egku Hkkjrh; ioZr Jsf.k;ka bl izdkj gS%

1. महान हिमालय श्रृंखला
2. काराकोरम श्रृंखला
3. आल्टिन श्रृंखला
4. गांगकार छोएली नामग्याल श्रृंखला
5. सर्दन श्रृंखला
6. नीछेन थांगला श्रृंखला
7. न्गांगलोन श्रृंखला
8. थांगला श्रृंखला
9. यारा तागस्ते श्रृंखला
10. कुनलुन श्रृंखला
11. आमये माछेन श्रृंखला
12. देगे त्रोला श्रृंखला
13. खारवा कारपो श्रृंखला
14. मिनयाक गांगकार श्रृंखला

यह दो प्राचीन भूमियों और सभ्यताओं को अलग करने वाली एक प्राकृतिक सीमा है, एक ऐसी प्राकृतिक सीमा जिसके द्वारा व्यापारी, तीर्थयात्री और विद्वानों ने यात्रा की और संस्कृति, ज्ञान तथा वस्तुओं का आदान–प्रदान किया, एक ऐसी प्राकृतिक सीमा जिसमें सैकड़ों पवित्र चोटियां और पवित्र झीलें हैं, जैसे कैलाश पर्वत (गांगरिनपोछे), मानसरोवर झील (त्सो मफाम), एक ऐसी प्राकृतिक सीमा जिसमें 1959 तक सेना की कोई मौजूदगी नहीं थी, जब चीनियों ने तिब्बत पर कब्जा कर लिया, एक ऐसी सीमा जिस पर पहली बार 1962 में भारत–चीन युद्ध लड़ा गया।

तिब्बत पठार को तीसरा ध्रुव भी माना जाता है, क्योंकि यह 46,000 हिमनदियों की भूमि है जो 1,05,000 किमी क्षेत्र तक फैली हुई हैं। इसकी वजह से यह पठार उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव के बाद बर्फ का तीसरा सबसे

बड़ा भंडार बन जाता है और इस ग्रह पर मौजूद हासिल कर सकने लायक ताजा जल का सबसे बड़ा स्रोत भी। 'तीसरा ध्रुव' शब्द सबसे पहले स्विट्जरलैंड के प्रसिद्ध अन्वेषक मार्केल कुर्ज (मेमोरियम 129 में, अल्पाइन क्लब शोक संदेश) जिन्होंने 1933 में लिखे एक आलेख में हिमालयी क्षेत्र के तिब्बती पठार को 'विश्व के तीसरा ध्रुव' के रूप में उल्लेख किया था। यही शब्द उनके दोस्त जी.ओ. डायहरेनफर्थ ने 1955 में एक प्रकाशन 'टू द थर्ड पोलः द हिस्ट्री ऑफ द हाई हिमालया' में इस्तेमाल किया था।

हाल के वर्षों में चीनी वैज्ञानिकों ने प्रमुखता से तिब्बत के पठार को तीसरा ध्रुव कहा है। तिब्बतियों के लिए यह पठार उनकी अपनी भूमि है, जिसे वे प्रेम से बर्फ के भूमि का स्वर्ग कहना पसंद करते हैं, एक ऐसा स्वर्ग जो दक्षिण में विशाल बर्फ से ढंके हिमालय जैसे पहाड़ों से, पश्चिम में काराकोरम, उत्तर में अल्टीन ताघ और गांगकार छोग्ले नामग्याल और पूर्व में खावा कारपो एवं मिनयाक गोंगकर पर्वत श्रृंखला से घिरा है। भारत की सबसे ऊंची चोटियां और महान पर्वत श्रृंखलाएं तिब्बती पठार के दक्षिणी किनारे पर हैं। विशाल बर्फ से ढंका रहने वाला हिमालय तिब्बत पठार के दक्षिण–पश्चिम में शान से फैला हुआ है, दक्षिणी ढलान पर भारत से उसका सामना होता है, जिसकी वजह से विशाल भारतीय उपमहाद्वीप को ठंडी हवा और जल मिलता है।

11- frCcr% ,f'k;k dk ty Vkoj

तिब्बत पठार को सही ही एशिया का जल टावर कहा जाता है, क्योंकि यह एशिया की छह सबसे बड़ी और सबसे महत्वपूर्ण नदियों का स्रोत है, जैसे (अंग्रेजी/तिब्बती नाम) यांगत्सी/ड्रिचु, येलो/माछू, मेकॉन्ग/जाझू, सालवीन/ग्यालमो न्गुल्छू, सिंधु/सेंगे खबाब और ब्रह्मपुत्र/यारलुंग त्सांगपो।

इन नदियों से अत्यंत जरूरी सिंचाई का जल मिलता है, जिनसे कि दुनिया की कुछ सबसे घनी जनसंख्या वाले देशों जैसे पाकिस्तान, भारत, नेपाल, बांग्लादेश, बर्मा, थाइलैंड, लाओस, कम्बोडिया, वियतनाम और चीन में करोड़ों किसानों के खेतों की जरूरत पूरी होती है।

इसी तरह, तिब्बत के पठार से निकलने वाली सिंधु नदी के किनारे 4,000 साल से भी पहले सिंधु घाटी की महान सभ्यता का वास था। सिंधु घाटी सभ्यता भारतीय उपमहाद्वीप में सबसे पहले ज्ञात सभ्यताओं में से है और सिंधु नदी तिब्बत से भारत आने वाले दर्जनों नदियों में से मात्र एक नदी है, इनमें ब्रह्मपुत्र, सतलज, कर्नाली, अरुण, मानस आदि शामिल हैं और इनसे भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी हिस्से में करोड़ों लोगों की जरूरतों की पूर्ति होती है। तीसरे ध्रुव के 12,000 किमी वर्ग मीटर जल से यह सुनिश्चित होता है कि एशिया की प्रमुख नदियों को जल का स्थायी प्रवाह होता रहे। यह दुनिया की करीब 20 फीसदी आबादी के सामाजिक–आर्थिक विकास पर गहरा असर डालता है जिनकी निचली जलधाराओं के पास करीब 1.5 अरब की आबादी रहती है। तिब्बत की नदियों को कोई भी बड़ा नुकसान हुआ तो इसका असर दुनिया की 40 फीसदी जनसंख्या पर किसी न किसी रूप में पड़ेगा।

frCcr d iBkj l fudydj cgu okyh mRrj Hkkjr dh iem[k ufn;k

Øe	ufn;k		ty'kj.k {k= jkT;
	Hkkjrh; uke	frCcrh uke	
1	ब्रह्मपुत्र	यारलुंग त्सांगपो	अरुणाचल प्रदेश, असम
2	सिंधु	सेंगे खबाब	जम्मू–कश्मीर
3	सतलज	लांगछेन खबाब	हिमाचल प्रदेश, पंजाब
4	करनाली / घाघरा	मछा खबाब	उत्तर प्रदेश
5	अरुण / सनकोसी	भुमछू	बिहार
6	मानस	ल्होड्राक खारछू	असम

वास्तव में, तिब्बत पठार एशिया की लगभग सभी प्रमुख नदी जल प्रणालियों का शुरुआती बिंदु है। ऐसी ही एक नदी है ब्रह्मपुत्र (यारलुंग त्सांगपो) जो पूर्वोत्तर भारत और बांग्लादेश की जीवन रेखा है। विशाल गंगा का मैदान, भारत का सबसे उपजाऊ कृषि इलाका तिब्बत पठार से आने वाली दर्जनों नदियों, जैसे करनाली / घाघरा (मछा खबाब), अरुण / सन–कोसी (भूमछू) और गंडक नदी की सहायक नदियां। सिंधु नदी (सेंगे खबाब) जम्मू–कश्मीर के लद्दाख के अत्यंत बंजर इलाके में लोगों के जीवन में सहायक होती है, जबकि सतलज (लांगछेन खबाब) नदी पंजाब के उर्वर कृषि मैदानों से गुजरती है। लगभग उत्तर भारत की समूची नदियां तिब्बत पठार के कुछ हिस्सों से निकलती हैं।

समुद्र की सतह से औसतन 4000 मीटर से भी ज्यादा ऊंचाई और करीब 25 लाख वर्ग किमी के विशाल इलाके वाले तिब्बत के पठार में जाड़े में अत्यंत ठंड पड़ती है, तो गर्मी में अत्यंत गर्मी। जमीनी सतह वायुमंडल की तुलना में सूरज की किरणों को ज्यादा अवशोषित करता है, तो यह पठार ऊंचाई पर हवा के मुकाबले सतह को ज्यादा गर्म करता है, इसकी

वजह से भूमि–समुद्री दबाव का अनुपात बढ़ जाता है और मानसून की तीव्रता बढ़ जाती है।

तिब्बत का पठार तापीय और यांत्रिक दबाव तंत्र की वजह से क्षेत्रीय और वैश्विक जलवायु पर भारी प्रभाव डालता है। तिब्बत का पठार ध्रुवीय क्षेत्र के बाहर सबसे बड़ा क्रिस्फोरिक (पृथ्वी पर जमे हुए जल का हिस्सा) विस्तार रखता है और यह एशिया की सभी बड़ी नदियों के जल का स्रोत है। इसलिए इसे क्षेत्रीय पर्यावरणीय चुनौतियों और वैश्विक पैमाने पर जलवायु परिवर्तन के विस्तारण, दोनों लिहाज से व्यापक तौर पर वाहक बल के रूप में देखा जाता है। इस प्रकार भारतीय मानसून और पूर्वी एशियाई मानसून की समय और तीव्रता पर तिब्बत के पठार में होने वाले जलवायु परिवर्तन का भारी असर पड़ता है। यहां तक कि यूरोप और उत्तर–पूर्व एशिया में बढ़ते लू के असर को भी तिब्बत पठार में बर्फ की पतली होती चादर से जोड़ा जा सकता है।

भारत में पहला मानसून पूर्वानुमान 1882 में तब नवगठित भारतीय मौसम विभाग (आइएमडी) के चीफ रिपोर्टर एच.एफ. ब्लैनफोर्ड के द्वारा जारी किया गया था। यह पिछले जाड़े में हिमालय पर्वत पर बर्फ की चादर की मात्रा पर आधारित था, क्योंकि बर्फ की ज्यादा चादर खराब मानसून का संकेत देती है।

12- frCcr d iBkj ij ekStnk Ik;koj.kh; gkyr vkj Hkkjr ij mld fufgrkFk

d½ frCcrh iBkj ij tyok;q ifjorLu

वायुमंडल के वैज्ञानिक (ला जोल्ला, कैलिफोर्निया में स्क्रिप्स इंस्टीट्यूशन ऑफ ओसनोग्राफी) वी. रामनाथन ने कहा कि वैश्विक जलवायु परिवर्तन की हमारी समझ इस पर विचार किए बिना अधूरी रहेगी कि तिब्बत के पठार में क्या हो रहा है। इससे निश्चित रूप से संकेत मिलता है कि तिब्बत के पठार की प्रमुख वैश्विक जलवायु संबंधी भूमिका क्या है। पठार पर जिस आसन्न चिंता को महसूस किया जा रहा है, वह है पिछले एक दशक में इसके तापमान में करीब 0.3 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि, जो कि पिछले पचास साल से जारी है–यह वैश्विक तापमान में वृद्धि के दोगुने से भी ज्यादा है– और इसका नतीजा यह है कि तेजी से हिमनदियां खिसक रही हैं और परमाफ्रॉस्ट (स्थायी रूप से जमे बर्फ) का क्षरण हो रहा है। इस प्रकार के तीव्र बदलाव का तिब्बत के पठार की भूमि और एशिया में तिब्बती नदियों के किनारे रहने वाले करोड़ों लोगों के हितों पर गहरा असर होता है।

चीन पर तिब्बत के कब्जे के बाद से ही मानवीय गतिविधियों की वजह से तेजी से पर्यावरण का क्षरण हुआ है। तिब्बत में बड़ी संख्या में चीनियों के आकर बस जाने की वजह से तिब्बती जनता के मौजूदा भूमि इस्तेमाल प्रकृति पर विपरीत असर पड़ा है। अत्यधिक बांध बनाने और खनन की वजह से तिब्बत के नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र और उसके भू–परिदृश्य को भारी नुकसान हुआ है। तिब्बत के पठार पर मानव प्रेरित भूमि इस्तेमाल में बदलाव की वजह से गर्मी में भारतीय मानसून काफी तीव्र हुआ है और पूर्वी चीन में गर्मी का मानसून कमजोर हुआ है।

[k½ rtsh l fgeufn;k d f[kldu d [krj

1950 के दशक से ही अब तक तिब्बत के पठार में बर्फ में शुद्ध रूप से कोई बढ़त नहीं हुई है। तिब्बत की तरफ के हिमालय में 10 डिग्री सेल्सियस से ज्यादा की गर्मी बढ़ने से तिब्बत पठार के 82 फीसदी से ज्यादा हिमनदियां खिसक गई हैं। तिब्बती पठार अनुसंधान संस्थान (आईटीपीआर) के शू बाइक्विंग के मुताबिक, 'पठार पर बर्फ पिघलने का

सीजन अब जल्दी होने लगा है और यह देर तक रहता है।'

तिब्बती पठार अनुसंधान संस्थान (टीपीआर) के निदेशक याओ तानदोंग (2007) के मुताबिक यदि यही दर जारी रही तो तिब्बती पठार की दो–तिहाई हिमनदियां साल 2050 तक गायब हो जाएंगी। तिब्बती पठार और आसपास के इलाकों में हिमनदियों का खिसकना 1960 के दशक से ही देखा जा रहा है और पिछले 10 वर्षों में इसमें तीव्रता आई है। हिमनदियों के खिसकने की मात्रा तिब्बती पठार के आंतरिक इलाकों में तुलनात्मक रूप से कम है और यह पठार के हाशिए के इलाके को बढ़ा रहा है, क्योंकि सबसे ज्यादा खिसकाव किनारों पर हो रहा है। इस इलाके में हिमनदियों के खिसकने से तिब्बत पठार और इसके आसपास के इलाकों के जलविज्ञान संबंधी दबाव पर असर पड़ रहा है।

हिमनदियों के खिसकने से पठार की नदियों के अपवाह में 5.5 फीसदी से ज्यादा की बढ़त हुई है। दक्षिण एशिया की कई नदियों जैसे ब्रह्मपुत्र, सिंधु, करनाली, सतलज, अरुण, मानस आदि नदियां तिब्बत के पठार के हिमनदियों के आसपास से ही निकलती हैं। तेजी से हिमनदियों के पीछे खिसकने की वजह से नदियों में जल की मात्रा में अचानक बढ़त होगी और इसका नतीजा विनाशक बाढ़ होगा, दूसरी तरफ, निकट भविष्य में यही नदियां सूख भी सकती हैं। इस तरह के परिदृश्य विनाशकारी साबित होने वाले हैं, क्योंकि ये दुनिया के सबसे घनी जनसंख्या वाले इलाकों से गुजरती हैं और दुनिया में ज्यादातर देश इन इलाकों में होने वाले कृषि पैदावार पर निर्भर करते हैं।

हिमनदियों के तेजी से खिसकने की वजह से एक और बड़ा खतरा है हिमनदीय झीलों के फट जाने से आने वाली बाढ़। किसी पहाड़ी चोटी की तलहटी या छोटी पहाड़ी घाटी में स्थित अस्थिर झीलों या हिमनदीय झीलों में तेजी से हिमनदियों के पिघलने की वजह से पानी के निकलने की वजह से उनके कभी भी फट जाने का खतरा बना हुआ है। भारी मात्रा में पानी और मलबे के अचानक फूट पड़ने से विनाशक बाढ़ आती है, जिसे हिमनदीय झील विस्फोटक बाढ़ (जीएलओएफ) कहते हैं।

इंटरनेशनल सेंटर फॉर इंटीग्रेटेड माउंटेन डेवलपमेंट (आइसीएमओडी) के मुताबिक हिमालयी क्षेत्र में 8000 से ज्यादा हिमनदीय झीलें हैं, जिनमें से 200 के खतरनाक हो जाने की आशंका है। उदाहरण के लिए, सतलज

की सहायक नदी पारीछू तिब्बत में एक विशाल भूस्खलन की वजह से बाधित हो गई, जो कि एक अस्थिर रॉक फाल बांध की वजह से हुआ था। साल 2000 और 2005 में तिब्बत की पारीछू झील फट गई, जिसकी वजह से हिमाचल प्रदेश के किन्नौर और शिमला जिले में भारी विनाश हुआ।

उत्तराखंड में करीब 968 हिमनदीय नालियां बहकर गंगा की खाड़ी में गिरती है और 4,660 से ज्यादा हिमनदियां सिंधु, श्योक, झेलम और चिनाब नदी तंत्र को जलापूर्ति करती हैं। रावी, ब्यास, चिनाब और सतलज नदी प्रणाली में जल 1,375 हिमनदियों और 611 हिमनदीय नालियों से आता है जो तीस्ता और ब्रह्मपुत्र खाड़ी में गिरती हैं, सालाना जलापूर्ति में इनका हिस्सा 50 से 70 फीसदी तक है।

भारतीय वानिकी अनुसंधान और शिक्षा परिषद के महानिदेशक डॉ. अश्वनी कुमार ने (24 फरवरी, 2016) बताया, "हिमालयी हिमनदियों का लगातार पिघलना भारतीय कृषि के लिए भारी चिंता की बात है, क्योंकि भारत की सदाबहार नदी प्रणाली का ज्यादातर हिस्सा हिमालय से ही आता है, जिसका देश की खाद्य उत्पादन प्रणाली पर व्यापक निहितार्थ और खतरा है।"

x½ frCcr dh ufn;ksa ij cM+s iSekus ij cka/k cukus ls [krjk

तिब्बत से सीमा पार नदियों के लिए एक और बड़ा खतरा 1950 के दशक से ही तिब्बती नदियों पर अभूतपूर्व तरीके से बांध का निर्माण है। तिब्बत पठार के अत्यंत ऊंचे भूकंप संभावित क्षेत्र में होने के बावजूद हाल के वर्षों में वहां विशाल बांध बनाने का नया ट्रेंड जोर पकड़ा है। वैज्ञानिकों का मानना है कि विशाल बांध भूकंप को प्रेरित भी कर सकते हैं और उनके शिकार भी हो सकते हैं। जल प्रपात वाले बांध एक तरह का चेन रिएक्शन शुरू कर सकते हैं और किसी भी तरह के असर को और बढ़ा सकते हैं।

ऐसे कई चीनी विशेषज्ञ हैं जो यह दावा करते हैं कि साल 2008 का वेनछुआन भूकंप (जिसमें 80 हजार लोगों की मौत हुई थी) शायद पास के जिपिंगपू बांध से प्रेरित हो सकता है और 2014 का लुडियन भूकंप शिलुओडू बांध से। यारलुंग साम्पो (ब्रह्मपुत्र) पर बनने वाला 510 मेगावॉट का जैम्मू पनबिजली बांध और इसी नदी पर बनने जा रहे कई और बांध से पठार की पारिस्थितिकी और भारत एवं बांग्लादेश जैसे निचली

जलधाराओं पर रहने वाले लोगों के हितों को भारी नुकसान हो सकता है। असम और अरुणाचल प्रदेश के करोड़ों लोग जिनका जीवन और संस्कृति इस प्राचीन नदी के तट पर निर्भर है, उसको भारी खतरा हो सकता है।

तिब्बत में चीन हर बड़ी नदी और उसकी सहायक नदियों पर बांध बना रहा है। जब हिमालयी पारिस्थितिकी तंत्र पर आने वाले खतरे को पहचानने की बात आती है तो चीन इससे अलग ही रहता है। तिब्बत को हड़प कर इस तरह से चीन ने एशिया के जल नक्शे को बदल दिया है। उसका उद्देश्य इसमें और बदलाव करने का है। वह ऐसे बांध बना रहा है, जो सीमा पार बहने वाली नदियों की धारा ही बदल देंगे, जिसकी वजह से वह निचली जलधाराओं के देशों से तोलमोल की अपने पास ज्यादा क्षमता रखेगा।

fu"d"k

खेती भारत में करोड़ों लोगों को रोजगार, आमदनी और जीविका प्रदान करने के सबसे बड़े स्रोतों में से है। भारत का रोजगार में लगे वर्ग का करीब दो–तिहाई या भारत की जनसंख्या का करीब 50 फीसदी हिस्सा खेती पर निर्भर है। भारत में खेती काफी हद तक मानसून और नदियों, हिमनदी या वर्षा पर आधारित नदियों पर निर्भर है। भारत के कुछ सबसे उपजाऊ इलाकों की जल जरूरत या तो नदियों से पूरी होती है, या बारिश से हासिल प्रचुर जल से। गंगा के उपजाऊ मैदान या असम के मैदानों में जल की जरूरत हिमनदियों के पिघलने से आने वाले नदी जल से होती है।

केंद्रीय और दक्षिण भारत का काफी बड़ा हिस्सा सिंचाई के लिए मौसमी या वर्षा जल पर आधारित नदियों पर निर्भर रहता है। मानसून भारत में वर्षा जल के एकमात्र स्रोत हैं और कृषि मानूसन पर बुरी तरह से निर्भर है। लेकिन भारत और एशिया में अन्य जगहों पर बहने वाली तिब्बती नदियों पर विशाल बांधों के तेजी से निर्माण और हाल के वर्षों में भारतीय मानसून की अनिश्चितता का बढ़ना (कुछ हद तक तिब्बती पठार की हिमनदियों के तेजी से पिघलने की वजह से) खतरे की घंटी है और इसके बारे में कठोर कार्रवाई करने की जरूरत है। भारतीय नदियों की जलापूर्ति करने वाले तिब्बत के पठार पर मौजूद हिमनदियों के खिसकने से लघु अवधि में बाढ़ और दीर्घ अवधि में सूखा पड़ सकता

है। इसके अलावा मानसून की प्रवृत्ति अनिश्चित और विनाशक होने की वजह से (आंशिक रूप से तिब्बत के पठार पर बदलाव से प्रेरित) भारतीय उपमहाद्वीप के करोड़ों किसानों को बहुत मुश्किल आने वाली है, जिससे खाद्य पदार्थों की तंगी होगी और आर्थिक मंदी आ सकती है।

एशिया और खासकर भारत में सामाजिक, आर्थिक और जलवायु की स्थिरता कायम करने के लिए तिब्बत के पठार का सेहतमंद रहना अपरिहार्य है। इसलिए सरकार और भारत की जनता के द्वारा महान भारतीय समाज के दीर्घकालिक प्रगति के लिए गंभीर प्रयास करना चाहिए।

इस तरह के प्रयास होने चाहिए:

1- bl ckr dk le>us ds fy, oSKkfud vuqla/kku vkSj ppkZ gksuh pkfg, fd%

- भारतीय मानसून को प्रभावित करने के लिए तिब्बत पठार की क्या भूमिका हो सकती है।
- कई भारतीय नदियों के स्रोत के रूप में तिब्बत पठार की क्या भूमिका और महत्व है।
- तिब्बत के पठार पर तेजी से हिमनदियों के पिघलने, विशाल बांधों के बनाने और तिब्बत पठार में गैर जिम्मेदराना तरीके से मनमाने खनन से तिब्बती नदियों के प्रदूषित होने से क्या खतरा हो सकता है।

2- Hkkjr ljdkj dks D;k djuk pkfg,%

- तिब्बत के पठार के नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा के लिए चीन सरकार से अनुरोध करें और उन्हें इसमें जोड़ें
- तिब्बत पठार की बेहतरीन तरीके से रक्षा कैसे की जा सकती है, इसके बारे में भारतीयों, चीनियों और तिब्बतियों के बीच सम्मेलनों और सेमिनारों को करने में सहयोग करें और प्रोत्साहित करें।
- भारत के दीर्घकालिक हितों के लिए तिब्बती पठार की पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा को प्राथमिकता दें।

13- frCcr ij phuh dCtk vkSj Hkkjr dk [krjk

भू–राजनीतिक प्रतिस्पर्धियों के रूप में भारत और चीन काफी विवादास्पद सीमा पर एक–दूसरे का सामना करते हैं। एक तरह से समूची 2,521 मील (4,057 किमी) की सीमा, जो दुनिया की सबसे लंबी सीमाओं में से है, विवाद में है और दोनों देशों को अलग करने के लिए हिमालय पर कोई परस्पर स्वीकार्य रेखा नहीं है। दोनों देशों के बीच करीब 52,125 वर्ग मील (1,35,000 वर्ग किमी) जमीन के लिए विवाद है, जो कि पूरे कोस्टारिका या अमेरिका के अलबामा राज्य के आकार के बराबर है। यह साफ है कि चीन के अभी के या अतीत के अन्य पड़ोसी राज्यों के साथ विवादों से तुलना करें तो भारत के साथ उसका विवाद अपने विशाल आकार और इलाके के महत्व दोनों लिहाज से महत्वपूर्ण है। हालांकि, दोनों देश ऐसी स्थिति में नहीं हैं कि एक–दूसरे को दबा सकें, लेकिन दोनों एक–दूसरे को संभावित भू–राजनीतिक प्रतिस्पर्धी के रूप में देखते हैं।

चीन और भारत दोनों अब जब आर्थिक ताकत बनते जा रहे हैं, तो दोनों अब ज्यादा अंतरराष्ट्रीय आकर्षण हासिल कर रहे हैं, ऐसे समय में जबकि वैश्विक ताकत एशिया की तरफ आ रही है। यह अंतर्निहित सामरिक मतभेद और प्रतिस्पर्धा हालांकि कम ध्यान आकर्षित करती है। दोनों दिग्गज विकास के प्रतिस्पर्धी राजनीतिक और सामाजिक मॉडल का प्रतिनिधित्व करते हैं। वास्तव में चीन और भारत सिर्फ दो देशों से ज्यादा कुछ हैं, वे विशाल प्राचीन सभ्यताएं हैं, जो मानवता के करीब 40 फीसदी हिस्से का प्रतिनिधित्व करते हैं।

दोनों महान देशों के बीच जटिल और तरल रिश्ते से किस तरह से अलग इतिहास, पहचान और संस्कृति विकसित होती है, इसका एशियाई भू–राजनीति, अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा और वैश्वीकरण पर महत्वपूर्ण असर होता है।

phu&Hkkjr lhek fookn dh 'k|#vkr

विशाल तिब्बती पठार, समूचे यूरोपीय महाद्वीप के आकार के करीब दो–तिहाई के बराबर, दो सभ्यताओं को अलग करता है, जिसकी वजह से छिटपुट सांस्कृतिक और धार्मिक संपर्क और सीमित होता है और राजनीतिक संबंध अनुपस्थित हो जाते हैं। साल 1951 में तिब्बत पर कब्जे

के बाद ही बड़ी संख्या में चीनी सेनाएं पहली बार खड़ी झुकाव वाले वक्रीय सीमा पर पहुंचीं।

सन 1962 में चलने वाले 32 दिन के जंग से भी मसला नहीं सुलझा, क्योंकि चीन की नाटकीय जीत से भी हुआ यह है कि दुश्मनी और बढ़ गई तथा भारत का अपना राजनीतिक उभार हो गया। आज चीन और भारत दो अलग सांस्कृतिक और राजनीतिक समूहों का प्रतिनिधित्व करते हैं और दोनों के अपने अलग मूल्य हैं। विरोधाभास यह है कि 1949 में चीन में कम्युनिस्ट पार्टी के सत्ता में आने के बाद भारत उन पहले देशों में था जिसने माओ त्से तुंग के शासन काल को मान्यता दी। हालांकि, सत्ता हासिल करने के बाद माओ का पहला कदम यह था कि उन्होंने सोवियत तानाशाह जोसेफ स्टालिन को गुप्त रूप से बताया कि चीनी सेना 'तिब्बत पर हमले की तैयारी' कर रही है और उन्होंने पूछा कि क्या सैनिकों को साजो–सामान की आपूर्ति में सोवियत वायु सेना कोई मदद कर सकती है।

तो चीन की नई कम्युनिस्ट सरकार द्वारा ऐतिहासिक रूप से बड़े बफर देश तिब्बत को हड़प लेने के बाद भी–एक ऐसा कदम जिसने भारत के बाहरी प्रतिरक्षा पंक्ति को खत्म कर दिया–भारत सरकार सतत रूप से चीन का समर्थन करती रही और उसे एक ऐसे पड़ोसी के रूप में देखना शुरू किया जो हाल में ही उपनिवेशवाद के विध्वंस से बाहर निकला हो। यहां तक कि जब स्वतंत्र तिब्बत ने चीनी आक्रमण के खिलाफ अंतरराष्ट्रीय मदद की अपील की तब भारत ने नवंबर 1950 में संयुक्त राष्ट्र महासभा में इसकी चर्चा का विरोध किया। भारत सरकार अक्टूबर 1950 में तिब्बत पर चीनी सैन्य हमले की शुरुआत से पूरी तरह से अनभिज्ञ रही, क्योंकि तब दुनिया का ध्यान कोरियाई युद्ध पर केंद्रित था। जनमुक्ति सेना (पीएलए) द्वारा पूर्वी तिब्बत पर कब्जे में तेजी से मिली सफलता ने चीन को यह हिम्मत दी कि वह कोरियाई युद्ध में दखल दे सके। बाद में नेहरू ने यह स्वीकार किया कि चीन ने तिब्बत पर जिस तरह की फुर्ती और बेरहमी दिखाई, उसकी उन्हें उम्मीद नहीं थी। वह 'चीनी दूतावास के इस दावे पर भरोसा कर बैठे कि चीन शांतिपूर्ण तरीके से तिब्बत के भविष्य का फैसला करेगा और तिब्बत के प्रतिनिधियों से सीधे बात करेगा।"

नेहरू जिसे बेहद भोलेपन से एक 'मूर्खतापूर्ण जोखिम' मानते थे, उसका तथ्य यह हुआ कि माओ के शासन के कुछ ही महीनों के भीतर तिब्बत

को हड़प लिया गया और उसके सामरिक महत्व की जगहों पर नियंत्रण हासिल कर लिया गया और इसके बाद भारत पर सीधा सैन्य दबाव आना शुरू हो गया।

नेहरू जिसे भौगोलिक रूप से अव्यावहारिक मानते थे वह भी जल्दी ही एक भू–राजनीतिक सच्चाई बन गया और उसने भारतीय सुरक्षा को इतना ज्यादा प्रभावित किया, जो पहले कभी नहीं हुआ था। इससे चीन जनवादी गणराज्य और पाकिस्तान के बीच एक साझा भूमि कॉरिडोर बन गया, जिसकी मदद से चीन–पाकिस्तान सामरिक धुरी फली–फूली। तिब्बत पर कब्जे ने पहली बार चीनी शासन में चीन को भारत, भूटान और नेपाल से सटी हुई सीमा दी।

एक और बड़ी गलती जिसने इस बात की गारंटी कर दी कि भारत–चीन सीमा के विवाद की शुरुआत हो, वह थी 1954 में नेहरू द्वारा चीन के साथ एक तरह के एकतरफा समझौते पर दस्तखत करना। इस समझौते ने दिखाने के लिए भारत–चीन रिश्ते को 'पंचशील' या 'शांतिपूर्ण सहअस्तित्व' के पांच सिद्धांत की सुर्खियों के साथ स्थापित किया। पंचशील समझौते के द्वारा तिब्बत पर चीन के नए नियंत्रण को भारत ने औपचारिक रूप से मान्यता दे दी, भारत ने औपचारिक रूप से उन सभी अतिरिक्त क्षेत्रीय अधिकारों और सुविधाओं को छोड़ दिया जो चीनी कब्जे से पहले उसे तिब्बत पर हासिल था। इस समझौते के द्वारा भारत इस बात के लिए राजी हो गया कि छह महीने के भीतर 'चीन के तिब्बती इलाके' के यातुंग और ग्यांत्से में मौजूद अपने सैन्य दस्ते को पूरी तरह से हटा लेगा और एक वाजिब कीमत पर अपनी डाक, टेलीग्राफ और सार्वजनिक टेलीफोन सेवाओं को पूरे साजो–सामान के साथ चीन सरकार को सौंप देगा, जिनको कि भारत सरकार चीन के तिब्बत इलाके में संचालित कर रही थी।' 1950 के हमले से पहले चीन का ल्हासा में उसी तरह का दूतावास हुआ करता था, जैसा कि तब भारत का था और इससे यह बात पुख्ता होती है कि तब तिब्बत एक आज़ाद मुल्क था।

तिब्बत पर चीनी दावे को भारत ने औपचारिक रूप स्वीकार तो कर लिया, लेकिन इसके बदले में उसने तत्कालीन भारत–तिब्बत सीमा पर चीन की स्वीकार्यता नहीं ली, इसमें पूरब में मैकमोहन रेखा भी थी जो कि 1941 में ब्रिटिश भारतीय सरकार और तिब्बत सरकार के बीच हुए समझौते में स्वीकार की गई थी। वास्तव में 1954 के समझौते में सीमा व्यापार के लिए

पर्वतीय दर्रों और चौकियों के उल्लेख को ही नेहरू ने चीनी स्वीकृति के रूप में पेश किया। ये दर्रे और चौकियां भारत और तिब्बत सीमा पर थीं।

मसले को और बिगाड़ते हुए उन्होंने चीन के इस बयान पर ध्यान देने की जरूरत नहीं समझी कि उसने भारत के साथ एक सीमा–व्यापार समझौते पर दस्तखत किए हैं, न कि किसी सीमा निपटारे के समझौते पर। वास्तव में पंचशील समझौते पर दस्तखत के तत्काल बाद ही चीन ने भारत के कई सीमांत इलाकों पर अपना दावा कर दिया और चोरी से उन दो पहाड़ी दर्रों में घुसपैठ कर लिया जिन्हें समझौते में सीमा चौकी माना गया था।

इसके काफी पहले चीन भारत के लद्दाख इलाके से होते हुए तिब्बत तथा एक और विशाल कब्जा किए हुए इलाके सीक्यांग को जोड़ने के लिए एक राजमार्ग बनाना शुरू कर चुका था। सीक्यांग इलाके में तुर्की बोलने वाले मुस्लिम नस्लीय समूह रहते थे। पंचशील समझौते के बाद के वर्षों में चीन–भारत के रिश्ते तनावपूर्ण रहे और चीन का सीमा पार घुसपैठ आखिर में 1962 में पूरे चीनी सैन्य हमले की पराकाष्ठा पर पहुंच गया। जैसे माओ ने तिब्बत पर हमला तब किया, जब दुनिया कोरियाई जंग में उलझी हुई थी, उसी तरह उन्होंने भारत पर हमले का समय भी काफी सोच–समझ कर चुना।

माओ के प्रधानमंत्री चाउ एन लाई ने सार्वजनिक तौर पर यह स्वीकार किया कि यह जंग 'भारत को सबक सिखाने के लिए' किया गया था। जिस तरह से नेहरू चीन पर आंख मूंद कर भरोसा कर रहे थे, चीन से धोखा मिलने पर वह शिकायतें करने लगे। जिस दिन चीन ने हमला किया हताश नेहरू ने देश के सामने इसको इन शब्दों में स्वीकार किया: 'शायद इतिहास में ऐसे उदाहरण कम मिलते हैं, जब एक देश किसी दूसरे देश की सरकार और जनता के साथ इतना दोस्ताना और सहयोगी रवैया रखता हो और दुनिया के मंचों पर उसके हितों का समर्थन करता हो और वही देश एक दिन दुश्मन बन जाए।'

उस समय जो भू–राजनीतिक पृष्ठभूमि थी उसमें भारत को चीनी दबाव से कोई राहत नहीं मिल सकती थी। चीन क्या फिर वास्तव में भारत को 1962 जैसे चौंकाने वाले जंग के साथ 'अंतिम सबक सिखाने के लिए' तैयार है, यह बात कई कारकों पर निर्भर करती है, जैसे कि ऐसे हमले की

जवाबी कार्रवाई के लिए भारत की रक्षा तैयारी कितनी है, चीन के भीतर के घरेलू कारक जैसे कम्युनिस्ट सत्ता को चुनौती देने वाली आर्थिक एवं सामाजिक अशांति और अंतरराष्ट्रीय मंच पर ऐसा माकूल मौका जैसा कि 1962 में क्यूबा मिसाइल संकट के रूप में मिला था। तो भारत यदि फिर से नींद में गाफिल नहीं पकड़ा जाना चाहता तो उसे चीन की नीतियों के प्रति ज्यादा व्यावहारिक रवैया अपनाना होगा, शब्दजाल में खुद को फंसाने से बचाना होगा, अपनी प्रतिकार क्षमता मे बढ़ोतरी करनी होगी और मोलतोल की कूटनीति में अपना पूरा जोर लगाना होगा।

14- vkt dk lkLd'frd lc/k

दलाई लामा 31 मई 1959 को तिब्बत की सीमा पार कर भारत आए। अगले वर्षों में उनके हजारों देशवासी भी भारत आ गए। भारत में शरण मिलने के बाद वे पहले कई साल मसूरी में रहे और उसके बाद हिमाचल प्रदेश के धर्मशाला में अपना मुख्यालय स्थापित किया। वहां से उन्होंने तिब्बत की संस्कृति को संरिक्षत रखने की कोशिश शुरू की जो कि तिब्बत में खतरे में पड़ गई थी। इसके लिए उन्होंने कई संस्थाओं की फिर से स्थापना की।

– धर्मशाला में तिब्बती चिकित्सा एवं ज्योतिष संस्थान (मेन–त्सी–खांग)

– धर्मशाला में तिब्बती कला एवं प्रदर्शन संस्थान (टीआईपीए)

– धर्मशाला में तिब्बती रचनाओं और ग्रंथों का पुस्तकालय

– कर्नाटक में तीन महान गेलुक्पा (येलो संप्रदाय) के मठ (गानदेन, सेरा और ड्रेपुंग)

– दिल्ली में तिब्बत हाउस (नई दिल्ली में तिब्बती संस्कृति को संरक्षित रखने के लिए सांस्कृतिक केंद्र)

भारत सरकार के सहयोग से उत्तर प्रदेश के सारनाथ में एक तिब्बती विश्वविद्यालय खोला गया। अब काफी प्रसिद्ध हो चुका केंद्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान (सीयूटी) पीएचडी तक के विद्यार्थियों को न केवल तमाम सुविधाएं प्रदान करता है, बल्कि इसने तमाम गायब हो चुकी पांडुलिपियों की तिब्बती से संस्कृत में फिर से अनुवाद करने का एक काफी साहसिक कार्यक्रम चलाया है। इस विश्वविद्यालय के प्रमुख जाने–माने विद्वान प्रोफेसर जी.सी. पांडे हैं।

तिब्बत में 1959 में मौजूद रही ज्यादातर मठीय विश्वविद्यालयों को आज भारत में फिर से स्थापित कर दिया गया है। ऐसे कुछ उदाहरण हैं:

– सेरा, गादेन और ड्रेपुंग के तीन मठीय विश्वविद्यालयों की कर्नाटक में स्थापना

– उत्तराखंड के राजपुर में साक्य केंद्र की स्थापना

– उत्तराखंड के क्लीमेंट टाउन में मिनड्रोलिंग मठ की स्थापना

– सिक्किम के रुमटेक में करमापा का मुख्यालय

– कर्नाटक और पश्चिम बंगाल में कई अन्य प्रमुख मठों की स्थापना

– हिमाचल के डोलानजी में बोन परंपरा का भी प्रतिनिधित्व है

ऐसा लगता है कि दुनिया की छत पर लंबे समय तक एकांतवास करने के बाद बौद्ध पंडित भारत लौट आए हैं। वैसे तो भारत और तिब्बत के बीच के सांस्कृतिक संबंधों को कई कठिन परिस्थितियों से गुजरना पड़ा है, लेकिन वे तमाम झंझावातों के बावजूद कई शताब्दियों तक बचे रहे हैं। दलाई लामा की भारत में मौजूदगी और भारत सरकार के हित इस रिश्ते के बचे रहने की सबसे अच्छी गारंटी हैं।